श्रीमद्रामरसामृत

(अमृत सतसई)

"ऐसो अनुपम काव्य लहि, जा सम [illegible] न गन्य
भाषा-कविता-कामिनी, आजु भई अति धन्य।"

—प० किशोरीलाल गोस्वामी।

* * *

"अमृत सतसई पै सखे!, अमृत सतसई वार
अमृत सतसई करि थकै, तऊ न पावै पार।"

—लाला भगवानदीन।

रचयिता—

"अमृत"

श्रीमद्रामरसामृत

(अमत सतसई)

"ऐसो अनुपम काव्य लहि, जा सम अन्य न गन्य
भाषा कविता कामिनी, आजु भई अति धन्य।"

—प० किशोरीलाल गोस्वामी।

* * *

"अमृत सतसई पै सखे!, अमृत सतसई वार
अमृत सतसई करि थकै, तऊ न पावै पार।"

—लाला भगवानदीन।

रचयिता—

श्रीयुक्त लाला अमृतलाल माथुर

(जोधपुर निवासी)

१९८१ वि०

—०—

प्रथम संस्करण १०००] [मूल्य ॥=)

प्रकाशक—

श्रीयुत लाला नन्दलाल माथुर,

नयावास, जोधपुर,

(मारवाड़)

कलकत्ता ८।१ रामकुमार रक्षित लेनस्थ

'समाचार प्रेस' में

चन्द्रभाल मिश्र द्वारा मुद्रित।

श्रीहरिश्शरणम्।

भूमिका

कुचेरा (जोधपुर—मारवाड़) निवासी स्वर्गीय रायसाहब लाला गोपाललालजी एक भगवद्भक्त सज्जन थे। उनका हृदय रामभक्तिसे सना हुआ था। उन्होंने 'श्रीरामसुधारस' बनाकर रामभक्तोंको उसका रस-आस्वादन करनेका अवसर दिया। श्रीराम-सुधारसमें भक्ति-रस संयुक्त प्रार्थनाके सुन्दर पद अनेक राग रागिनियोंमें हैं। उन्होंने प्रायः ६००० छन्दोंमें रामायण-कथाकी रचना भी की थी।

लाला गोपाललालजीके पुत्र लाला नन्दलालजीने गतवर्ष श्रीराम-सुधारसको पुस्तकाकार प्रकाशित कर दिया किन्तु छन्दोबद्ध रामायण अभी अप्रकाशित है। यह लाला गोपाललालजीके पुण्यका फल है कि उनके पुत्र भी रामभक्तिपरायण हैं और उनके विनयसम्पन्न द्वितीय पुत्र लाला अमृतलालजीने तो सिद्धहस्त भावुक कवि होनेका परिचय दिया है।

पुत्र पिताकी प्रतिमूर्त्ति होता है। इसलिये लाला अमृतलालजीके कवि होनेमें हमें आश्चर्य नहीं है—योग्य पिताके योग्य पुत्र सिद्ध होनेका आनन्द अवश्य है।

प्रस्तुत पुस्तक श्रीमद्रामरसामृत (अमृत सतसई) लाला अमृत-लालजीकी अमरकृति है—हिन्दी कविता-काननका एक सौरभमय पुष्प वृक्ष है। इसके सम्बन्धमें भूमिकाके रूपमें कुछ पंक्तियां लिखते मुझे हर्ष होता है। इसमें कविवर बिहारीलालके आदर्शपर श्रीराम-चरितका चित्रण बड़ी सुन्दरताके साथ किया गया है। इसके प्रायः सभी दोहे शब्दालङ्कार, अर्थालङ्कार और भक्तिभावकी विशिष्टताको लिये हुए हैं।

बड़े ध्यानसे इस पुस्तकका अवलोकन कर मैं इस सिद्धान्तपर उपनीत होता हूं कि इसमें अधिकसे अधिक १२५ दोहे हैं, जिनमें अन्य कवियोंके भावका प्रतिबिम्ब (छाया) दिखलाई देता है और शेष सब भाव कविके अपने हैं। यह कविकी कारीगरी है, कि कौन किससे कहता है और कहांका वर्णन है, इस बातको दोहा अपनी ध्वनिसे स्वयं प्रकट कर देता है। कई दोहे दो दो तीन तीन अर्थवाले भी हैं।

स्वर्गीय पं० सत्यनारायणजी कविरत्नके बाद ब्रजभाषाके युवक कवि लाला अमृतलालजीकी यह भक्तिरस-प्रधान प्रौढ़ रचना श्लाघनीय और अभिनन्दनीय है।

इसकी उत्तमता और सरसताके लिये अपनी पसन्दगी प्रकट करते हुए हिन्दी संसारके चिरपरिचित प० जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदीने ठीक ही लिखा है कि आजकल ऐसी कविता बहुत कम देखनेमें आती है।
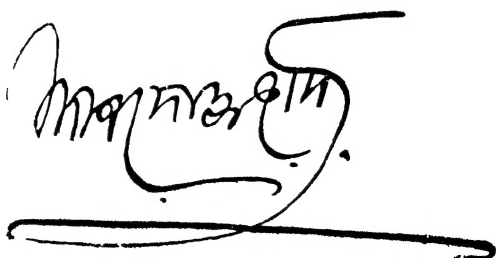
इसके अतिरिक्त प० राधाचरणजी गोस्वामी, प० पद्मसिंहजी शर्मा, प० किशोरीलालजी गोस्वामी, लाला भगवानदीनजी, प० सकलनारायणजी पाण्डेय जैसे विद्वानोंकी प्रशंसापूर्ण सम्मतियां भी इस पुस्तककी उत्कृष्टताकी परिचायक हैं।

मैं लाला अमृतलालजीको श्रीरामभक्तिरसलसित इस रचनाके लिये बधाई देता हूं। आशा है, कविताप्रेमी सज्जन इस पुस्तकका समादर कर कविकी उत्साहवृद्धिके कारण बनेंगे।

कलकत्ता

पौष कृ० १३

सं० १९८१ वि०

(कलकत्ता समाचार सम्पादक)

श्रीमद्रामरसामृत (अमृत सतसई) के सम्बन्धमें

विद्वानोंकी सम्मतियां:-

(१)

अहो अपूरब पाइ यह, आजु अमिय-उपहार।
रोम रोम छकि मगन भो, सुरपुर सुधा बिसार ॥१॥

श्रीमद्रामरसामृतहिं, पाइ भयो आनन्द।
मन मोहित, बानी थकित, कर्म अकर्म अमन्द ॥२॥

श्रीरामामृत सतसई, उर बसि गई रसाल।
पढ़ें सुने याके सदा, कृपा करै रघुलाल ॥३॥

ऐसो अनुपम काव्य लहि, जा सम अन्य न गन्य।
भाषा कविता कामिनी, आजु भई अति धन्य ॥४॥

याकों अपनावैं सदा, सादर रसिक रसाल।
राम रसामृत दिव्य यह, कहैं "किशोरीलाल" ॥५॥

—किशोरीलाल गोस्वामी

* * *

(२)

कविता देखी। बड़ी उत्तम और सुरस है। आजकल ऐसी कविता बहुत कम देखनेमें आती है। मैं इसे पसन्द करता हूं।

—जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

* * *

(३)

—कविता चुभीली है

—राधाचरण गोस्वामी

* * *

(४)

श्रीयुक्त अमृतलालजी माथुर विरंचित 'अमृत सतसई' देखकर चित्त प्रसन्न हुआ। सरस अनुप्रास पूर्ण दोहोंमें संक्षेपसे रामायणकी कथा कही गई है। इसीसे इसका दूसरा नाम श्रीमद्रामरसामृत भी है अनुप्रासोंकी अधिकताके कारण कहीं कहीं कुछ कठिनता आ गई है। ऐसे स्थलोंपर कविने फुट नोट देकर अर्थ स्पष्ट कर दिया है।

कविका परिश्रम सर्वथा प्रशंसनीय है। रचना मनोहर है। आशा है ब्रज भाषाके पक्षपाती कविता प्रेमी इसे पसन्द करेंगे। मेरी सम्मतिमें पुस्तक प्रचार पाने योग्य और पठनीय है। रामभक्तोंके कामकी चीज है।

—पद्मसिंह शर्मा

* * *

(५)

हमने श्री० अमृतलालजीकी बनायी हुई 'अमृत सतसई' पुस्तक पढ़ी। इसकी भाषा सरल शुद्ध और भाव मनोहर हैं। इसके दोहे प्राचीन कवियोंकी छटा दिखलाते हैं।

कहीं कहीं यह सन्देह हो जाता है कि हिन्दीके अष्ट छापवाले कवियोंमेंसे किसीने उक्त पुस्तकको लिखा है पर बात यह नहीं। ग्रन्थकारने प्राचीन कविताओंके पढ़नेमें बहुत परिश्रम किया है इससे

उनकी कविताओंमें अनुपम सौन्दर्य दृष्टि गोचर होता है। पुस्तकका विषय रामयशोवर्णन है।

—सकलनारायण शर्मा
(काव्य व्याकरण-सांख्यतीर्थ)
कलकत्ता युनिवर्सिटी।

* * *

(६)

अमृत सतसई पे सखे! अमृत सतसई वार।
अमृत सतसई करि थकैं, तऊ न पावैं पार ॥१॥

प्रति दोहाके सुरस हित, दो हा करें सुरेश।
सुजस विमोहा जानिये, सुख अन्दोहा वेश ॥२॥

अलङ्कारकी छवि छटा, भाव घटा घनघोर।
रस बरसत घन स्यामको, लखि नाचत मनमोर ॥३॥

पढ़िहैं समुझि सचेत कवि, पैहैं मोद अथोर।
सुनि आदरिहैं सुजन जन, जस ह्वै हैं चहुं ओर ॥४॥

करुनासागरकी लहर, ह्वै हैं तुमरी ओर।
दया "दीन" पे राखियो, कीरति रतन बटोर ॥५॥

—भगवानदीन।

* * *

श्रीराम।

नम्र निवेदन।

भगवत्कृपासे यह ग्रन्थ लिखा गया और आज प्रकाशित होरहा है। मैंने जिन जिन सज्जनोंको इसे दिखलाया उन्होंने इसकी प्रशंसा कर मेरे उत्साहको द्विगुणित कर दिया उन महानुभावोंका मैं बड़ा ही उपकार मानता हूं। जिन विद्वद्वरोंने इसपर अपनी सम्मति देनेकी कृपा की है, उनको मैं अन्तस्तलसे धन्यवाद देता हूं। दैनिक कलकत्ता समाचारके सुयोग्य सम्पादक काव्यमर्मज्ञ उदार-हृदय गुणग्राही श्रद्धेय पण्डित झाबरमल्लजी शर्म्मा महोदयने मेरी प्रार्थना पर इस पुस्तककी भूमिका लिखनेका कष्ट उठाया है अतएव उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं। पुस्तकमें अनवधानता वा प्रमादवश जो त्रुटियां रह गयीं हैं उनके लिये मैं क्षमा प्रार्थी हूं। आशा है कि, हरिभक्त कविता-रसिक सज्जन मेरी इस भेंटको स्वीकार कर मुझे अनुगृहीत करेंगे।

निवेदक—

अमृतलालमाथुर।

(जोधपुर निवासी)

॥ श्रीराम ॥

श्रीमद्रामरसामृत.

(अमृत-सतसई ।)

बालकाण्ड ।

मङ्गल मूल प्रसंग ।

श्रीरामस्तव ।

श्री सीता-पति-पद भजत, [1] भजत [2] अमंगल भार ।
याते नित मंगल-करन, चित ! वे चरन चितार ॥१॥

नित नव जस जिनको जगत, किनहुँ न पायो पार ॥
करौ कृपा रघु-कुल-तिलक, अखिललोक-आधार ॥२॥

मनमथ हूँ के मन-मथन, शिवके शिवद [3] सुजान ।
मोद-जनक नृप जनकके, नमो भानु-कुल-भान ॥३॥

---

१ भजनेसे २ भागते है ३ सुखदाता

द्रवौ राम अभिरामसो, कोशल-राज-किशोर।
सब दरसन [१] दौरत सदा, जा दरसनकी दौर ॥४॥

परोजु मेरी बानिकी [२] यहै बानि [३] अभिराम।
अंतर जामी आपकों, रटै निरंतर राम ! ॥५॥

गंगा जमना सरसती, चार धाम सुख-धाम।
सब तीरथ धामहि [४] करूं, तव कीरत करि राम ! ॥६॥

श्रीगणेशवन्दना।

विद्याप्रद मंगल करन, सुमरन हरन अनीठ।
विजयसुजससुखसंचरन, नमोचरनगनईठ ॥७॥

श्रीशारदास्तुति।

सरसति ! वरसिय रस अमिय, रघुवर-सिय-जसलीन।
कृति [५] परवीन कवीन सी, कर नवीन करवीन ! ॥८॥

श्रीशंकरस्तुति।

दुख हरि हरि-रस बकसिहैं, सुख-निवास करि दास।
कररे मन ! विसवास करि, आसुतोस-पद-आस ॥९॥

श्रीभगवतीवन्दना।

जो कुपूत गनि तुम तजौ, और कहां अवलम्ब।
विसरे हूं न विसारियो, हे बरवासन [६] अंब ! ॥१०॥

---

१ सांख्यादि दर्शन २ वाणी ३ बान (टेव) ४ घरहीमें ५ कविता
६ हमारी कुलदेवि

श्रीमारुतिस्तव।

करों जु आरति-हरन-वर, मारुति-चरन प्रनाम।
आठ जाम जाके रमें, रोम रोममें राम ॥११॥

श्रीमद्रामायणाचार्यवन्दना।

नमो आदि कवि तुलसिकहुं, राम-रसिक-समुदाय।
बाल बोल बोलैं मधुर, जिनकी जूठन पाय ॥११॥

श्रीदरियावमहाराजकीस्तुति।

जयतारन प्रगटे जगत, प्रेम रहन प्रतिपाल।
रामसुधारससोंभरे, श्रीदरियावदयाल ॥१२॥

श्रीगुरुदेववन्दना।

संत महंतन माल सह, श्रीगोपालकृपाल।
चरन-सरन-सुमरन करों, सद्गुरु श्रीहरिलाल ॥१३॥

कौन बतावे आप विन, राम-भगति को भेव।
हरौ तरस हरि-दरसकी, दया करौ गुरुदेव ॥१४॥

श्रीपितृपदप्रणति

पितुपद करों प्रनाम, अमृत नाम जिन ममधर्‍यौ।
जब जान्यो विष-ठाम, रामसुधारस मुखभर्‍यौ ॥१५॥

श्रीराम-रस-प्रशंसा प्रसंगः।

नैननि सों निरखत रहत, नित अनेकको नास।
तऊ तजत नाहीं अरे !, अमर रहनकी आस ॥१६॥

मान वहै जो कहत हौं. मानव है तो चेत ।
परि हरि जी सों पाप सब, करि हरिजी सों हेत ॥१७॥

जनम मरन जातन सहै, जनमजनममें जीव ।
जरा मरन आय न सकै, राम रसायन पीव ॥१८॥

कोटि जुगति करिवो करौ, मुगति होनकी चाय ।
जगत-पतीकी भगति विन.जग-तपती[1] नहिं जाय॥१९॥

बालपनो सो बावरो, बूढापौ बलहीन ।
जोबन आवे भजन तौ, जोबन बीच प्रवीन ॥२०॥

संत चरन-रज तिलक करि, अंजन प्रेम अँजोय ।
राम मंत्रके जापते, राम राय वस होय ॥ २१ ॥

सोई कविता सोहनी, सोई गीत सुगीत ।
जा करिवे करि कीजिये. जगत-पती सों प्रीत ॥२२॥

सुरता लहि रससों भरी, राग रामसों लाय ।
जो गायन ! परवीनतू, तो रामायन गाय ॥ २३ ॥

श्रीरामजन्म बाललीला प्रसंग ।

जय जय जय श्री अवध जय, जय सरजू सुख-मूल ।
जिन-सुधि सुख दुख जगतके,जात भगत जन भूल॥२५

---

१ ताप

लियो देखि दसरथजु सो, प्रजा-पाल सुख-धाम।
विश्व-भरनके काम सों, विश्व-भरन [1] विश्राम ॥२६॥

देख्यौ जाहि कुबेर [2] हूं, सो कुबेर दरसात।
एक बेर दसरथ दियो, दियो करत दिन रात ॥२७॥

राम-जनम मम वंशमें, यहै अमंद अनंद।
उदित होत प्रमुदित सदा, दिन दिन दिपत दिनंद [3] ॥

जगी जु दसरथ भवनमें, भव [4]-मन-भरन उदोत।
जा ते यह जग जगमगत, जयो अलौकिक जोत॥२९॥

विहरत अज-सुत-अजिरमें, लोचन-रोचनहार।
पुरवासिनके उर वसत, लाल लाड़ले चार ॥३०॥

विधि टूठ उन पै अली !, बूठे सुधा सुधाम।
अंकनि [5] लाए भाल भल, अंकनि [6] लाए राम ॥३१॥

जा पर वारे जात ही, अघ परवारे [7] जाहिं।
हिय हारे वा राम पै, वे जीते जग माहिं ॥३२॥

१ विश्वम्भर (ईश्वर) २ कुत्समय भो ३ सूर्य ४ शंकर ५ विधाताके अंक ६ गोदीमें ७ बालेबाले

विश्वामित्र-यज्ञ-रक्षा ।

राजत राजन-राजि [१] में, राज-राज रघु-राज ।
देव-राजि राजत जथा, देव-राज [२] महराज ॥३३॥

गाधिज आय अगाधमति, बोले बोल ललाम ।
मख-राखन राखस-दलन, राघव ! दीजे राम ॥३४॥

अजौं न सूखो ओठ पय, समर समरपिय काहि ।
लड़िबे-लायक [३] लाल प्रभु !, लड़िबे-लायक [४] नाहिं ॥

लीजे संपति साहिबी, देश कोष मन-काम ।
चलौं सदल खल-दल-दलन, पलन कल न बिन राम

हरि सुजान सिसु जान जनि, हमकों आन न चाहि
हरि [५] प्रताप बिन भूमि-पति !, हटैं निसाचर [६] नाहिं

जो लखि धूरि तिलोक-धन, विरस विलोक पियूख ।
कौन भेंट धरि मेट हौ, राम भेंटकी भूख ॥ ३८ ॥

जोर जोर कर विधि कहौ, और ओर दिल देन ।
हठि हरिके पैंड़े परे , वे हटिवेके हैं न ॥३९॥

---

१ पंक्ति २ इन्द्र ३ लालित होने योग्य ४ लड़ने योग्य ५ राम वा सूर्य ६ राक्षस वा तारागण आदि

सरवससे वरवस दिए, नृप दुइ लाल ललाम ।
असुर-खवारी करि करी, मख-रखवारी राम ॥४०॥

कंज नयन गंजन खलन, भव-भय-भंजन नाम ।
मुनि-मन-रंजन हार हौ, रहौ चिरंजय राम ! ॥४१॥

जनक-नगर जग-भट जुटे, सीय-सुयंवर-काम ।
राजि[1] विलोचन पोखिये, राजिव लोचन राम ! ॥४२॥

साप-ताप पापनि छुटी, जा प्रताप मुनि-बाम ।
वा पद-रजते पाप मम, रज करि डारौ राम ! ॥४३॥

हरि-जनके हियमें अहो !, रहै कहांते काम ? ।
जित छवि छाजै रावरी, रति-पति लाजै राम ! ॥४४॥

भोरते कोर रहे, जिन छोर सुख-धाम ।
धोर आनँद-अमियके, पग तर तोर राम ! ॥४६॥

जानति हौं जग-पति ! जगत, विगत पूंछ पशु जाम ।
जो इन पायन रत नहीं, पाय नर-तनहिं राम ! ॥४६॥

मिथिला-मोहन प्रसंग ।

सरस सफल मिथिला दिपै, प्रफुलित सुकृत-प्रताप ।
अमल उजल ऊँचे अटा, आतम मनो अपाप ॥४७॥

[1] नेत्रोंकी पंक्ति

मतवारो [1] मतवारियो, हित-मत वारो [2] लेत ।
गत [3] मतवारे लालपै, गत मत [4] वारे देत ॥४८॥

चलै न वा पर जोर कछु, चित चोरनकी चालि ।
चलो जाय बरजोर चित, बरजो रहै न आलि !

मोल लेत पीयूखकों, मधुर अमोल सुबोल,
अवलोकनि पर वारिये, सब लोकनिको मोल ॥५०॥

भली लेय करतार जो, कीरति या संजोग ।
अली-वरन वारो अली ! जनक-ललीके जोग ॥५१॥

इनके लौन सुरूपमें, कछुक टौन सो हेत
होत सचेत अचेत लखि, होत अचेत सचेत ॥५२॥

मारन मोहन वस करन, थंभन अरु उच्चाट
भले पढे ए दृग अली, आकरसनको पाठ ॥५३॥

कै अपने चित-चोर ए, चित हरिके लैजाहिं ।
कै अपने चित-चोर हैं, छपि छवि-वित-सँग जाहिं ॥५४

१ हे बुद्धि मानो २ लाभ ३ चाल है मतवाली जिनकी ४ गति और मति

टुकयक इन दृग टकटकी, इकटकजो टकजात ।
अटक जात भटकत रहत, विन टकान विकजात॥५५॥

अटक चटकमें जात मन, लटक लटकमें जात ।
हटक हटक हारिय तऊ, सटक सटक सँग जात॥५६॥

घूंघर वारे बाल पर, उर घर वारे बाल[1] ।
लखि उरझे उर-माल[2] में, सखि! न किती उर-माल[3] ॥५७

भिकरत रव-रस रदनते, करत वदन विधु जोति ।
फूलझरीसो[4] हेरि छवि, फूल-झरीसी[5] होति ॥५८॥

राम-वानि रति[6] मानिके, कान मान गहिलेत ।
आन वानि रतिमानहू[7], थान मान[8] नहि देत ॥५९॥

जिन आंखनि छाकनि छई, राम-रूप-रस चाख ।
इत उत ताकन सों रही, लोभ दिखाओ लाख ॥६०॥

कर जोरे अरजी करूं, सरजनहार! सनेह ।
देह देह दृग देह तौ, ए देखनकों देह ॥६१॥

---

१ जो नगरके बालक इनके साथ हुए हैं । २ हृदयकी माला । ३ हृदयोंकी मालाएं । ४ एक आतिशबाजी । ५ पुष्प वर्षा । ६ प्रीति । ७ रत्ती भर भी । ८ आदर ।

अलि ! वा विधिसों जाचिये, या विधिसों [१] कर जोर
इन आंखिनकों राखिये, इन-आंखिनकी ओर ॥६२॥

नित वसंत विलसंत इत, अनुरंजित अनुराग।
नंदनवन-नंदन रुचिर, रघुनंदन ! वर बाग ॥६३॥

वाटिका-विहार-प्रसंग।

सींचि बढ़ावत सम करत, लुनत सुधारत टारि।
रखत अकंटक मालि नृप, बाग सुदेश सँभारि ॥६४॥

भवा-भवन अलि लै चली, अवनि-नंदिनी होय।
फूलन फूल समात नहिं, तात ! जानकी जोय ॥६५॥

जिनकी कल कीरति मई, सियकी रति [२] संसार।
जगमें जय करते रहैं !, कर तेरे करतार ! ॥६६।

आवत अवलोके अली !, कोसल-राज-किसोर।
जगत-जियावन दृगनसों, उन चितयो मो ओर ॥६७॥

राजकुमार कि मार ए ?, दरस किधौं रस-चेत ?
चमन किधौं चसमन रमत ?, सुमन किधौं मन लेत ?

---

१ प्रकारसे। २ कान्ति (शोभा)

भली भली रव रस भरी, गली गली गुल-ओक ।
कली कली करतो रली, अली! अली [१] अवलोक ॥६९॥

जिन दिन हिय हेरि न सके, हरि मन-हरन सनेह ।
चले अलेखे वे गए, दई ! न लेखे लेह ॥७०॥

मधुर सलोनी स्याम-छवि, वसी हिये करि हेत ।
चार नयन चूकत नहीं, रस-रहस्य कहि देत ॥७१॥

हरि हेरत बाधत बिचै, पलक रचे किन कूर ।
नैन रतन हरि हेरिवे, तिनको जतन जरूर ॥७२॥

भव-धनु-भञ्जन प्रसंग ।

● भ्रम भूले श्रम करतहौ, एकहि वाद अखंड ।
जौ लगि राम धरेनहीं, टरै न भवकोदंड ॥७३॥

सकल बली बल करि थके, करि न सके कछु काम ।
पन राखौ अब जनकको, जन-पन-राखन राम ! ॥७४॥

धनु-धुनि सुनि रामहिं सुरत, जय उचरत सुर-माल ।
थापी जन-उर-मालसी, सिय राघव-उर-माल ॥७५॥

---

१ भँवरा ● दो भाव

भार्गव कोप प्रसंग ।

* चंड-चाप खंडन कियो, पग मंडहु बल-धाम ।
जो सहाय सब जग करै, नहिं रबरै अरि राम ॥७६॥

तो करते हरि-धनु-चढ्यौ, उतरयो मो अभिमान ।
ऐंचि लियो गुन साथ ही मो मन राम सुजान ! ॥७७॥

मेरे औगुन क्यों गुनौ, हौ तुम तौ गुन-धाम ।
अन जानेकी चूककों, मति मन आनो राम ! ॥७८॥

सीताराम विवाह प्रसंग ।

रमा-रमन श्रीराम-सम, काहि कहिय अभिराम ।
जिनकी छवि-छाया-निकट, लागत काम निकाम ॥७९॥

उमा रमा रंभा रती, सुखमा-सीमा जोय ।
ते सीताको चित्र लखि, चित्र लिखी सी होय ॥८०॥

बनो बनो कस सोहनो, मनो मनोभव मोह ।
पीतांबर सांवर सुखद, सखि ! सीतावर जोह ॥८१॥

सरन-ताप-तम-हरनको, रामचन्द्र पन कीन ।
मनो सीतकर[1] ग्रहन कर, कर-आखर[2] कर दीन

* निन्दा स्तुति १ सीताका हाथ वा शीत किरणें २ हस्ताक्षर

ब्याह-उछाह अथाह सो, थाह लहै कहि कौन।
हरि हर अवलोकत रहैं, परिहर आए भौन ॥८३॥

बरे कुंवर वर चारि मुद, भरे जु भुवन असेस।
जो अनेक विबुधेस सुख, सो इनेक अवधेस ॥८४॥

सुवरन विवरन होत लखि, वरन जासु वर गात।
वा सियको वर सांवरो, हांसियकी यह बात ॥८५॥

भौंह कमान सुबान दृग, ए अल जग-जय-काम।
काहेकों धनु सर धरत, धर[1] धर दीजे राम! ॥८६॥

श्रीअवध प्रयान प्रसंग।

नेन भरत मन नहिं भरत, तुम बिछुरतहौ स्याम।
जाहु न यों जलदी किए, प्यारे पाहुन राम! ॥८७॥

नित हित सों चितवन करें, चित-हित इतने काम।
अति अचैन दिन रैन ए, नैन रहेंगे राम! ॥८८॥

कुल-कीरति मुद-मूरती, सुख-सूरति जड़ि-जीय।
मन मंदिर तो जोति बिन, सूने हुइहैं सीय! ॥८९॥

---

१ भूमि पर

पुतरी ! चख-पुतरी ! रहौ, सदा सुहाग तिहार।
पति-पद-रति गुरुजन-भगति, यहै सार संसार ॥६०॥

दाता सकल सुखानको, दुख दूखन-दमनीय।
एक पतीब्रत तीब्र तप, रमनीकों रमनीय ॥६१॥

अवध प्रवेश प्रसंग।

कोटि कलप विसरौं न बलि, अलि ! तेरो उपकार।
रघुवर राज कुंआरको, देखन दे दीदार ॥६२॥

हेरि हेरि हरखित सबै, चरित करत अभिराम।
रसके जसके मोदके, सुखके सागर राम ॥६३॥

जिन लीने जग जनमिके, सीताराम निहार।
धन धन धन वे नैन जग, उन-नैनन-बलिहार ॥६४॥

श्रीमद्रामरसामृतसिंचित अमृतसमशतिकायां कल्याणकल्पलतिकायां
समाप्तोऽयं प्रथमो बालकांडः ॥१॥

अवध काण्ड ।

अवध-आनन्द-प्रसंग

सबके मन-मंदिर वसौ, गुन-मन्दिर सुख-धाम ।
राव-रंक-मन-भावनी, रहनि रावरी राम ! ॥१॥

राम लोक-अभिरामको, थपत राज युवराज ।
सब घर धाई हरस-धुनि, अवध बधाई आज ॥२॥

मंथरा-केकयी-कुमति प्रसंग

भोरी ! भूल न भोगमें, नेक हिताहित हेर ।
चारहि दिनकी चांदनी, आगे अधिक अँधेर ॥३॥

चातुर है तो चेत कर, काटति हैं वे साख ।
जेठ कुँवर भूपति भए, भल आसा ढकि राख ॥४॥

केकयी वरयाचन प्रसंग

आजु दुहूँ वर देहु पिय !, मांगि प्रिये ! चित-चीत ।
प्रान जाय प्रन जाय नहि, रघु-वंसिनकी रीत ॥५॥

राज भरत बन रामकों, देहु वरस दस चारि ।
विकल भूप भू पर परे, विधि विपरीत विचारि ॥६॥

बड़न[1] रीति बड़ पाट-पति, भरत राम नहि भेद।
तदपि होहु भूपति भरत, वन रामहिं बड़ खेद ॥७॥

काननकी[2] कानन[3] दुखद, आनन आन न बात।
असि[4] चलाय चरचा न अब, असि[5] चलाय वरु गात॥

वहौ विभव निवहौ न पन, दहौ नरक तन-चाम।
बुरो कहै तो जग कहौ, रहौ दृगन-रुख राम ॥६॥

न कर वार[6] करवार[7] को, निज करसों[8] कर वार[9]।
मारन-कारन और कर, राम-विरह मति मार ॥१०

तत्ररामागमनम्।

पितु पेखत मोकों सदा सुख-फूले न समात।
मुख सूखे बिन सुधि परे, आजु कहा दुख? मात!

तुव सकोच मन सोच-बस, वचन-बँधे सत-धाम।
बरस चारि दस वन वसो, पितु-पन राखो राम! ॥

१ पुरखाओंकी। २ वनकी। ३ कानोंको। ४ ऐसी। ५ तलवार। ६ देर। ७ तलवार। ८ हाथसे। ९ चोट।

मात ! दुचित पितु बात लघु, उचित सुचित आदेस।
धरौं सीस आज्ञा अटल, भूमि जथा भुजगेस ॥१३॥

सहि संकट संकट हरैं, सुख लगि सुख तजिदेय।
पलटैं उन पितु मातुसों हितसों पलटैं तेय ॥१४॥

नहिं कछु ने सब कछु करें, वह उनकों दुख देत।
तदपि मात पितु पूतको, अहो ! सहैं न अहेत ॥१५॥

जा सुकृतीके सदनमें, छने पिता अरु मात।
तिन तजि तीरथ ओर तौ, पग तोरनकों जात ॥१६॥

जननि जनक जासों सुखी, रहत प्रमोद सुपूरि।
ता दुलारके दरसते, होत दुरित दुख दूरि॥१७॥

जो गिरीस गंगा तजै, धूजु तजै निज धाम।
धरनीधर [1] धरनी तजै, पितु-पन तजै न राम ॥१८॥

रामस्य स्वमातुरालये प्रवेशः।

लाभ-लट जग-दृगनकी, आनँद-उमगन-काल।
मगन लोग जा लगनमें [2], लगन [3] कबै वह ? लाल !

१ शेष। २ प्रेममे। ३ मुहूर्त्त।

सुनी सुपावन सुवन-मुख, वन जावनकी बात ।
विकल भई सब सुधि गई, दई ! दई ! कहि मात॥२०

जिनको जीवन तुमहिते, क्यौं वे ही वन देहिं ।
जानी अब रानी-करनि, अहो ! न जानी एहिं ॥२१॥

का पर झूठहि रूठिये, का सों कहिये कूर ।
वच्छ-विछोहा विधि बयो, मो सिर जीवन-मूर ! ॥२२॥

नियत समय निकरहि तुरत, जनि जननी ! कलपाय ।
तो पसाय सुख पाय हौं, आय परसिहौं पाय ॥२३॥

तुरत तुरत निवरत सुतौ, सुत ! संपतिको काल ।
संकटकी विकटा घटी, काटी कटै न लाल ! ॥२४॥

सीतासंग प्रसंग ।

सुनिकानन [1] कानन [2] चलत, पति प्राननके प्रान ।
लेति उसास उसास-ढिग, सँग चह जानकि जान ॥

जनक-लली हिय-कज-कली, प्रेम-पली अभिराम ।
जो न अजौं अवनी चली, वनी चली चह राम!॥२६

१ कानोंसे । २ वन ।

किमि मरालिसी मंदगति, मृदु मृनालिनी बाम ।
सहहि देह-दुख रहहि यह, वन विदेहजा राम ! ॥२७॥

कोमलांगि ! कानन कठिन, सास-सेव सुख-खानि ।
बेगि फिरौं पितु-पन रहे, भवन रहो भल जानि ॥

पति-पूजन-पीयूष तज, भज बिष-विषय विशेष ।
पति ! नीको यह देत हौ, पतिनीको उपदेश ॥२६॥

धरनि ! कठिनता परिहरौ, चरन करुन करनीय ।
कानन जात निहारि यह, सुता तिहारिय सीय ॥३०॥

कौशल्याअनुमति प्रसंगः ।

जग-जीवन ! वन जातहौ, लालन-लायक लाल !
जे जीव न तुम विन जियें, तिनको कवन हवाल?॥३१

अलप विरह पलकहु परै, कलप कालसो जात ।
ते तुम विन कैसे रहहिं, तात ! तिहारे तात ॥३२॥

जा कारन सरवस तजत, जा कारन प्रिय-प्यार ।
अमर अमल समरथ धरम सुत ! करियो तुव सार॥३३

धन तज जन तज प्रान तज, धारैं धरम अनूप ।
सो नर नहिं नरनाह नहिं, नारायनको रूप ॥३४॥

लक्ष्मण सुमित्रा सम्वादः ।

वन पयान प्रिय प्रभु करत, राम भानु-कुल-केतु ।
जननी ! सँग जायो चहूं, आयो आयसु-हेतु ॥३५॥

निसंदेह नर-देह को, लाह लाल ! तैं लेह ।
देह गेहको नेह तज, कर सुत ! राम-सनेह ॥३६॥

लाज न अजस न डाह डर, सोग विजोग न छेह ।
पावन जसकर परमहित, सांचो राम-सनेह ॥३७॥

दशरथ दैन्य राम वनयात्रा ।

मेरे दृग ! मेरे हृदय !, मेरे प्रान-विराम !
कियो भेस किनके कहे ? कहां रमनकों ? राम ! ॥३८॥

पविसो कियो कठोर विधि, मोर हियो दुख-धाम ।
तुमसे सुत परिहरत हूं, जो नहिं विहरत राम ! ॥३९॥

नैन-बैन-रस पोखिये, अहो स्याम ! सुख-धाम ! ।
नाजानूं कब होय अब, दरस रावरे राम ! ॥४०॥

तात [1] वात [2] मोहि न लगहिं, तात ! विचारिय बात ।
धरम सुजस धुव देखिये, सुखदुख-गति दिन रात ॥४१

१ गरम । २ पवन ।

आयसु आसिस दीजिये, तज विषाद वन जात ।
जंगल मंगल होयँगे, तो प्रताप ते तात ! ॥४२॥

पुरजन प्रेम प्रसंग:

अहो सजन ! सोहन ! सुखद !, सुनो सयाने लोय !
रामरतन हमकों तजत, जतन करोरे कोय ॥४३॥

लाय लगाई केकयी, दीनो जगत जलाय ।
पायन [1] के दुरलभ दरस, वे वन पायन [2] जाय ॥४४॥

राम ! रावरो विरह-पवि, पर्यो कठोर कुठोर ।
हम सहिवे समरथ नहीं. करत बिनै करजोर ॥४५॥

हेरिय दशा महीपकी, नैन नलिन जुगजोर ।
दया-दीठ करि देखिये, नेक अवधकी ओर ॥४६॥

सदन-वास सुर-सदन सो, आजुलगै [3] अभिराम ।
आजु लगै वह अंच [4] सो, रंचहु रुचै न राम ! ॥४७॥

विरहा पवि तव नहि परै, टरै सु करिये काम ।
कै सेवक सँग राखिये, रहिय सदन कै राम ! ॥४८॥

१ चरणोंके । २ पैदल ।
३ आज तक । ४ अग्निकी आंच ।

नाहक नाह ! गुनाह बिन, नांह तजिय बिन काम।
भोरे भूले बावरे, तऊ रावरे राम ! ॥४६॥

जो चित इन चरननि बसै, धसै न सो अब धाम।
बिन इनके अब अवधमें, रहैं कवन विध राम ॥५०॥

कानन सुकृत-निकेत सो, ऐंचि लेत सुखधाम।
कवने अघ दीनी[1] अवध, तुम तज दीनी राम ॥५१॥

धाम रहन कहियत कहा ?, हमरे आनँद-धाम।
प्रान देन नाहीं नहीं. आन रावरी राम ! ॥५२॥

हे प्रियजन ! हिय जनि भरो, धरो अवधि लग धीर।
धीर धरायहु तातकों, मानि विनय मम वीर ! ॥५३॥

पुरजन पश्चात्ताप।

सोवत सो खोवत सदा, होवत हरिहिं वियोग।
यह बैरनि किन ते बरी ?, निद्रा निदरन जोग ॥५४॥

आनाकानी करि गए, दया न आनी दाम।
ठानी बिनै अनेक विधि, नेक न मानी राम ! ॥५५॥

---

१ दीना (अनाथा)

सुख-सागर दरसत नहीं, तरसत मीन तमाम।
सोवत तजि धाए हमहिं, रहम न लाए राम ! ॥५६॥

राम जान जनि दीजिये, जान[1] दीजिये जान।
राम कृपाकर बान पै, करौ प्रान कुरबान ॥५७॥

हेर थके चहुंफेर रथ, विरथ मनोरथ काम।
किहि पथ हौ ? तव का मतो ?, पतौ न पायो राम! ॥५८

खरे बैन जो सुनि परें, मरे[2] मिलौ सुख-धाम।
तन-भंजनको तनकहूं, रंज न आवै राम ! ॥५६॥

दरस-तरस-दुख मेटिये, भेटिय आनँद-धाम।
हमदरदी दिखराइए. हम दरदी पर राम ! ॥६०॥

करुना कर करतारजू!, राम-दरस सुख-गेह।
फेर देह इक बेर वे, फेर लेह फिर देह ॥६१॥

जो न दरस दृग रामके, परो सरग-सर धूर।
नरकौ रघुबरको मिलन, मो मन तौ मनजूर ॥६२॥

रुख दसरथके लालके, जिनको अरथ न जाहि।
वे आखर मतना परौ, आनन कानन माहिं ॥६३॥

---

१ प्राण। २ मरनेसे।

दीठ न आय अदीठ [१] सो, और ढीठ जग हाय !
रे बिन दृग ! इन दृगन सों, वे दृग लिये दुराय ॥६४॥

घनानंद घनस्याम [२] बिन, भो मन मोर [३] उदास ।
आस करौ आसाढमें [४], आसनमें [५] का आस ॥६५॥

विपद्-करी तिमि सुख-भरी, घरी [६] घरी [७] जो धात [८] ।
हरी हरी हुइहैं पुरी, जरी जरी जो जात ॥६६॥

विबुध-नाह-सी साहबी, अवध-नाहके धाम ।
वाह तजी परवाह बिन, राहगीर लौं राम ॥६७॥

श्रृंगवेरपुर प्रसंग ।

अहो घरी आनँद-भरी, भल भाग सुख-साज ।
राम-सनेही सांवरो, ममपुर आयो आज ॥६८॥

वन दिखाय आनन [९] कह्यो, आनन [१०] नाथ ! नृनाथ
उबरन उजरन अवधको, राम ! रावरे हाथ ॥६९॥

सुलभ विभव-कारन तजै, दुरलभ धरम सुतंत ।
सो हत है सोहत नहीं, संत-समाज सुमंत ! ॥७०॥

---

१ अदृष्ट, (भाग्य)। २ श्याम मेघ वा तद्वत् राम। ३ मयूर वा मेरा।
४ आषाढ़ या आशायुक्त। ५ आश्विन वा आशा नहीं। ६ घड़ी।
७ बनाई। ८ विधाता। ९ लानेका। १० मुखसे।

हौं कछु कहि जानौं नहीं, सब जानौ सुख-धाम।
दीनन-दुख जानौ नहीं, तौ तुम जानौ राम! ॥७१॥

असवन[1]-दृग असुआ झरत, जिनसों बिछरत बार।
सजननके दिन बीतिहैं, कौन रीति? करतार! ॥७२॥

नाविक न्याय प्रसङ्ग।

तरनी[2] तरुनी[3] बनि उड़ै, सिल[4] लौं संसो साम!
पद धुवाय पधराय हौं[5], नाव न्याय मम राम! ॥७३॥

नहिं साधन विद्या न कछु, और न बिरति[6] बिचार।
यह सरवस जीवन यहै, एक नाव[7] आधार ॥७४॥

रंग-रँगीले रामके, केवट! तोकों रंग।
गंग उतारत रामकों, करी कठौता-गंग ॥७५॥

राम! काम का दामको, अपनो इक व्यौपार।
मो वारी[8] वारी[9] तरै, तो पारी भौपार ॥७६॥

१ घोड़ोंके। २ नौका। ३ युवती। ४ शिला (अहल्या)। ५ बैठाऊंगा। ६ वृत्ति (जीविका) या बैराग्य। ७ नौका या राम नाम। ८ वारी (पल्टी)। ९ पानी।

पथ प्रेम प्रवाह प्रसङ्ग ।

पावन [१] महि पावन करत, मन-भावन अभिराम ।
वन आवन कैसे भयो ?, रस वरसावन राम ! ॥७७॥

आरन-पग-धारन कह्यौ, कारन राज-किशोर ।
चितवत लोक चकोरसे, रामचंद्रकी ओर ॥७८॥

भलो ढियो इत आयके, चरन-सरन-विसराम ।
जड जीवन-दिसि देखिये. हे जग-जीवन राम ! ॥७९॥

सेद सुखाओ पय पियो. घरिक निवारो घाम ।
पहरक ठहरो महर कर. राम ! करो विसराम ॥८०॥

कहिय दया करि सो करहिं. देखि दया-दृग स्याम ! ।
आज रहो हिय-राज ! इत, प्रात पधारहु राम ! ॥८१॥

मनु हारहिं मनुहारहीं, अँग लखि भूलहिं अंग ।
चतुर चित्रसे बन रहे. रँगे राम-रस-रंग ॥८२॥

सिय तरु-तर बैठायके. पग-तर पेखि ललाम ।
जल बाढ़त दरसक—दृगनि, कंटक काढ़त राम ॥८३

१ चरणोंसे

कर बिजना जानकि करे. पति-हित पवन-प्रचार।
मनु नलिनी अलिको करे, कलिका सों सतकार ॥८४॥

तियन-विनय सुनि सकुचि सिय, सलज नैन मुसुकाय
चारु चितौनि बताय पिय. दियो पियूष पियाय ॥८५॥

प्रान-प्रान प्रानीनके. आन निहारौ नेक।
धारत हिये कितेक लखि. हारत हिये कितेक ॥८६॥

जो हिय नहिं हुलसाय लखि. सिखि वाकों भुलसाय
जो बसाय [१] सखि! यन [२] रखिय. अखियन-बीच बसाय

अहो लुनाई! माधुरी. सांतितेज-मय देह।
पूरब-पुन पाइय दरस. लाभ अपूरब एह ॥८७॥

पवि पाहन कोमल परे. अरे! नहीं संदेह।
इनहिं करे जे वन विदा. करै [३] करेजे तेह ॥८८॥

तन परसत सकुचत पवन, तिन वन पठवन हार।
कौन दई [४] पठई दई, [५] अस निरदई निहार ॥८९॥

१ वस चलैतो। २ इनको। ३ कड़े। ४ विधाता। ५ दी।

कियो कलाधर कलँकधर, रति[1] अनरति[2] पतिहीन।
जग-जीवनकों वन दयो, मो मति विधि मतिहीन ६०

चक विरही चातक तृषित, चिनगी चुगन चकोर।
कियो दियो विन वन इनहुं, या विधिते विधि भोर

केकि-चरन कोकिल-वरन, कंटक कुसुम सँगाति।
लखि चतुरानन[3] चतुरमुख[4], चतुर कहैं किहि भांति ?

जो ए वन वन विचरिहैं, विसयनसों मन खंचि।
भांति भांति भल भोग भव, विरचे वादि विरंचि ॥६३

हम जानत विधि नहिं रचे, विधि या विधि वन दीन
इन वाकी कारीगरी, सब गारी कर दीन ॥६४॥

इनकों वन काढ़े बने, गाढ़ गहो विचार।
तौ काहे न सुमननि सुमग, सिरजो सिरजनहार ॥६५॥

लोक भए लोकेशसे, दृग विलोक सुखधाम।
प्रानहुं पथ ढूंढन लगैं, जब पथ पूछत राम ॥६६॥

१ कामदेवकी स्त्री। २ राग (आनन्द) रहित। ३ ब्रह्मा।
४ ब्रह्मा वा चतुरोंमें मुख्य।

थके करन पथके चरन, दृग झरना झर लाय।
हिलत सीस दहिलत हियो, जीह जात जुरि जाय ॥९७॥

कै लीजे सँग जियत ही, कै पहुँचाइय धाम।
घायल तरपत मनि तजो, अहो अहेरी राम! ॥९८॥

यहां रहो दूसन कहा?, दूर न जाइय स्याम!।
पीवन दीजे प्रेम-रस, हे जग-जीवन! राम! ॥९९॥

जो करुनाकर! राखिये, हम चाकर बिन दाम।
पास तिहारे चरनके, दास रहेंगे राम! ॥१००॥

फिर हमकों देहौ दरस, अब कब? कृपा-निधान!।
सेवक लखि सुधि लीजियो, पथिक प्रानके प्रान! १०१

दरस-पियूष पियायके, पुनि वियोग-विष दीन।
कहा हमारो होन अब?, प्यारे पथिक प्रवीन! १०२

तुम देखे देखे न कछु, नजर [1] नजर [2] कर दीन।
दीन-बंधु! जो नहिं मिलो, कहा दीनको [3] दीन [4]?

वाद विवाद सवाद सब, तुमहिं विलोके बाद।
या दिनकों या दीनकों, कबहुं करोगे याद? ॥१०४॥

१ दृष्टि। २ भेंट। ३ गरीब। ४ हाल।

पियो दरस-पीयूसरस, दियो हियो तुम हाथ ।
दया करोगे दीन पै, नहिं बिसरोगे नाथ ! ॥१०५॥

पथिक पियारे ! करतहौ, नहीं न्यायकी बात ।
लिये जात सँग चेतकों, तन अचेत तज जात ॥१०६॥

थकित पदन श्रम-कन बदन, सिय-गति मंद ललाम ।
सब हेरत हैरत हिये, जब फिरि हेरत राम ॥१०७॥

सुभग कोटि मन-जातसे [१], इनके सँग मन जात ।
मृदुल गात बन-जातसे [२], तात-भ्रात बन जात ॥१०८॥

आजु किते जीवन अली !, जीवन-लाभ जँजाल ।
इनहिं निहार निहाल त्यों, बिछुरत बार बिहाल॥१०९॥

हेरि मया-मय दृग हमें, अपनो परिचय देत ।
कहे वाक वा कुंवरने, वहै रहे बसि चेत ॥११०॥

अहो रूप-रस-माधुरी, लेति जु मुए जियाय ।
पथिक पियासे करि गये, प्रेम-पियूष पियाय ॥१११॥

जबते जोए पथिक वे, थकित रह्यो मति थाम ।
भयो प्रेम-पथ-पथिक मन, भटकत टिकत न धाम ।

१ कामदेव जैसे । २ कमल जैसे ।

मूंदे मुख दृग जल बहत, तन पुलकित मन लीन।
मीत! न क्यों हियकी कहै?, बहै बटाऊ तीन ॥११३

लोयन[1] लाह लियो चहौ, लोयन[1] करो न बेर।
सब लोयन[2] लोयन[3] गए, सोयन लोयन हेर ॥११४

तुम देखे? कैसे रहे?, मृदुल मनोहर गात।
मिले बटाऊ बाटमें, कहौ बटाऊ! बात ॥११५॥

मिले बटाऊ बाटमें, मति कोउ पूछो बात।
हम अब आगे डग धरें, पग पाछेको जात ॥११६॥

बात बटाउनकी कछू, कहत कही नहिं जाय।
तनको भार लिये बहौ, मन उनमें रहि जाय ॥११७॥

जिन जाए जाए जहां, जांहिं जहां जहँ जात।
जिन जोए जोए जिन्हें, धन धन वे पुनवान ॥११८॥

तर सर होत हरे भरे, धर सुराह घन छांह।
अघ हारे जग-जीत जे, राम निहारे राह ॥११९॥

बिसरत नहिं चातक घनहिं, धरत ध्यान दिन रैन।
आज बिलोके राम वे, भरद्वाज भर नैन ॥१२०॥

१ आंखोंका। २ हे लोगो। ३ सबलोकोंके। ४ नेत्र।

दशरथ विरह प्रसङ्ग।

राम लखनसे सुत कहां ?, रूप-सील-गुन-रास।
कहँ सीतासी कुल-बधू ? अरु उनकों बनवास ॥१२१॥

भूखे प्यासे पथ थके, सूखे वदन रसाल।
ना जानूं कैसे अहैं ?, वारिज जैसे बाल ॥१२२॥

कानन हूँ न सुन्यो कहूँ, का कानन सों काम ?
क्यों दुख सहि वह बन बसहिं ?, राम प्रान मम राम।

सजन सनेही बहु मिले, मिले सुहृद समुदाय।
सो प्यारा कोउ ना मिला, देता राम मिलाय ॥१२४॥

सुमंत आगमन।

कहां राम ? सीता कहां ?, कहां लखन सुख-धाम ?
मो जीवन आयो नहीं, कहा कहायो ? राम ॥१२५॥

रामसन्देश वियोग वर्णन।

सानँद हों तो पद-दया, वन भवनहि सो भात।
सत रोचिय मोचिय दुखहि, मोहि न सोचिय तात ! ॥

लाखन विध ठानी विनय, प्रभु ! राखनके काम।
सत-संचन मानी सुमति, रंच न मानी राम ॥ १२७॥

दीठहि दीठ अनीठ सो, मो अदीठ अति ढीठ।
नीठ नीठ निरखत रह्यो, भए सु दीठ-अदीठ॥१२८॥

अह निकर्‌यौ अभिषेक-दिन, सुत निकर्‌यौ तज सीव
नहिं सुमंत! निकर्‌यौ अजौं, अर्‌यौ कहां अब जीव?

अस अवसर कहँ पायहै?, अहै अवस अवसान।
कहा जियत तज रामकों?, तू लज रखरे प्रान!॥१३०॥

विपद्-समय समयज्ञ प्रभु!, धरिय धीर धी-धाम।
इते अधीर न हूजिये, फेर मिलेंगे राम॥१३१॥

प्रान-त्रान पीयूष सो, है कोऊ? हित-काम।
करुना कर काहूक विधि, मोहि मिलावै राम॥१३२॥

वह बिनती वह वरमती, वे प्रिय बोल अनूप।
क्यों विसरौं? वह विस्व-प्रिय, रुचिर रामको रूप॥१३३

अवस एक दिन जायँगे, जैसे जग सब जाय।
राम दरस देते हमें, लेते तरस मिटाय॥१३४॥

मरन हमारो सरन है, विस हमको विसराम।
तुम बिन पियत पियूष हूं, जियत रहूं नहिं राम॥

जानत हौ जियकी विथा, सुधा! सुधारन काम।
दुख मेरो मोचन करो, लोचन-रोचन राम!॥१३६॥

ईठ मीठ सुरतरु सुधा, दीठ देत नहिं दाम ।
रूठो तो दरसन लगै, मोमन मनै न राम ! ॥१३७॥

नेक सुरुचि कर सुरतिसों, स्याम सुरति अभिराम ।
एक बेर इत आयके, रंचक भेंटो राम ! ॥१३८॥

धन धन धन नर नारि वे, लखि हैं चखनि ललाम ।
गए अवधि आए अवध, भए अवध-पति राम ॥१३९॥

पन तजि तन राखत नहीं, महि-मंडन मतिधीर ।
तन न रह्यौ दसरत्थको, पन न रहेकी पीर ॥१४०॥

भरत केकयी मिलन प्रसंग ।

पितु ? सुरपुर, क्यौं ? राम बिन, वे? वन, क्यौं ? मो हेतु
का ? तोकों भूपति करन, हा अनरथ-अघ-केतु ! ॥

नहिं तो पर बिजरी परी ?, जीह जरी नहिं जाय !
जो तैं बिजरीसी परी, हंस-वंस पर हाय ! ॥१४२॥

अरी अभागी ! का कहौं ?, कीने कैसे काम ?
दृग दीमे खटकत नहीं, वन भटकत वे राम ॥१४३॥

भरत कौशल्या भेंट प्रसंग।

मात ! मात-कृत घातमें, जो मेरो मत होय।
सदाचार वरजित सदा, करो विधाता मोय ॥१४४॥

राम-पियारे तात तुम, राम पियारे तोय।
धीर धरो नैन न भरो, होनी होय सु होय ॥१४५॥

भरत प्रबोधन प्रसंग।

होतब होत बड़ो बली, याको अचल विचार।
किन मानी मानी नहीं ?, होन हार सों हार ॥१४६॥

राम-विरह नृप-सोगमें, जरत लोग सब जात।
अवलंबन दे अवधि लग, अवध उबारो तात ! ॥१४७

जरत सुराखे काहि प्रभु !, जरत जु राखै होय।
राम-दरस बरसै सुरस, उबरै बरै न कोय ॥१४८॥

राज विभूति विभूतिसी, विषय विषम विष वाम।
राम बिना किन कामके ?, सब आराम हराम ॥१४९॥

अंतरजामी राम-पद, सुरति निरंतर होह।
राम बसे वन तदिन लौं, सुख सेवनको सोंह ॥१५०॥

अंतरजामी आप गुरु!, परखो उरकी पीर।
सब रस दरसत विरससे, दरस-तरस रघुवीर ॥१५१॥

उर पाकी टांकी परी, वाकी बांकी खेद।
करों निवेदन कौनसों, वेद न वेदन वेद ॥१५२॥

तनकी वेदनको[1] परै, वेदनकों[2] अनुमान।
कौन बिनासे मन-विथा, राम बिना अब आन ॥१५३॥

अनत[3] जरी-हित जल-सरी, भरी धरी बहु ठाम।
अंत[4] जरी ताकी जरी, निज कर राखी राम ॥१५४॥

दुसह दहै या देहको, लगी अगी उर ठाम।
कहा किये कोटिन जतन?, पिये बिना रस राम ॥१५५

पुरव[5] आस पीतांबरहि[6], विकसे दृग कज कोर।
बिन दरसे घनस्यामके[7], नहिं हरसे मन मोर[8] ॥

१ पीड़ा (वेदना) का। २ वैद्योंको। ३ अन्यत्र और ठौर। ४ हृदयमें। ५ पूर्व दिशा या पूर्ण करे। ६ पीला आकाश या पीत वस्त्र वाले राम। ७ श्याम मेघ वा राम। ८ मयूरका वा मेरा।

भरत-भक्ति प्रसंग ।

भरत न भूले राज-रस, जो रसिया रस राम ।
जाहि पियास पियूसकी, पियै सु मद किहि काम ॥१५७

परम विरत ह्वै चरन-रत, करत भगति-पथ प्रीति ।
भरत बतावत भगतकों, राम-मिलनकी रीति ॥१५८॥

सुरझाऊँ उरझी बरत, मुरझी सुरत सकाम ।
जलन बुझाऊं जीयकी. देव रिझाऊं राम ॥१५९॥

जिन आनन कानन मनहिं, रोचत राम-चरित्र ।
सांचे नर विधि वे रचे, और खचे सब चित्र ॥१६०॥

भरत समाज सहित राम दर्शनार्थ गमन ।

कवने बन ? बाने कवन ? कवन जतन करि जोय ?
पैये कवने पंथ करि ? राम ! रमैये ! तोय ॥१६१॥

जहां सहज सुख जीयको, भगत जननकी भीर ।
विहरैं खग मृग वैर बिन, वा वन पावन वीर ॥१६२॥

सुमनस झर लावें सुमन, हसति धरा हरियाल ।
आशु [1] आश [2] आशा [3] जनहिं, देखन आस [4] दयाल

१ शीघ्र । २ आशा । ३ आशा (दिशा) । ४ आस्य (मुख)

धन वे बनके विहग मृग, सफल किये दृग काम।
धन शुचिकृत उनके रुचिर, रुचिभर निरखत राम॥

जा तरुवर सरवर गहन, गिरिवर राम-विहार।
ता धरकी ता धूरकी, बार बार बलिहार॥१६५॥

आनन[1] लखि आनन[2] चहौं, आनन[3] आन[4] न काम।
प्यारे! किन कानन गए? प्रानन-प्यारे राम॥१६६॥

चित्रकूट चलि पाइये, अहो भरत! सुख-धाम।
मीन प्रवीनन-प्रान-निधि, प्रेम-पयोनिधि राम॥१६७॥

भरत! धन्य तुम धन्य तुम, तुम समान तुम तात!
सहज मिली तजि साहिबी, राम-रिझावन जात॥१६८

धर[5]-कारन धर[6] धर[7] परत, किती धराधर[8] धाय।
धराधीस[9] धरमें[10] धसैं, धरा[11] धरी रह जाय॥१६६

विमुख राम-अभिरामके, त्रिभुवन-विभव निकाम।
सो दुख हूं सुखकों सुखद, जो सनमुख रुख राम॥

१ मुख। २ रामको फेरलाना। ३ सौगन्ध पूर्वक। ४ दूसरा। ५ पृथवी। ६ धड़। ७ पृथवी। ८ धड़ाधड़। ९ राजा। १० पृथवीमें। ११ पृथवी।

भरत राम मिलाप प्रसंग।

लिये लाय हिय भरत हरि, करत देखि दंडोत।
एक रूप मिलनी मिलत, मिलत जोत जिमि जोत।

नाथ! तजी तुम अवधकों, वहां विपत-पवि-पात।
करि अनाथ नर-लोककों, सुरग सिधारे तात ॥१७२॥

पितु पयान सुर-पुर सुने, दीन-बंधु भे दीन।
करुना-सागर ह्वै रहे, करुना-सागर लीन ॥१७३॥

चला चली अवलोकिये, सकल चराचर भार।
राम तिन्हैं किमि रोइये?, जिन्ह गावत संसार॥१७४

खान पान खग मृग तज्यौ, तर सर जरत तमाम।
सिर हति हारे लोग सब, विरह तिहारे राम! ॥१७५॥

उर-धूनी दूनी विरह, सिर-धूनी सब जाम।
सूनी छवि लूनी बिना, अवध अलूनी राम! ॥१७६॥

भरत भए तुम बिन विरत, अवध-दसा अति दीन।
काहू विध हरिये विपद, प्यारे राम! प्रवीन! ॥१७७

पानि परसि पुचकारिए, ए हय हे हिय-जोत।
चरन [1] वीचरन [2] परिहरयौ, चरन-बीछरन [3] होत॥

बिगरी बात जु मात-मिस, मोरि सुधारिय साम!।
सेवक राखिय सरनमें, राज सँभारिय राम!॥१७९॥

जो देखिय अघ दासके, तौ न भौन तिहुं ठौर।
कृपा-कोर करि हेरिए, अपराधीकी ओर॥१८०॥

असरन-सरन! विसारिये, मात-विसम कृति बाम।
दोस दुरित करिये दमन, रोस न करिये राम!॥१८१

करत जोन नित सो करिय, मो कर तजो न साम।
जो न निहारो नेह सों, कौन सहारो? राम!॥१८२॥

दरस-तरस हरस न हिये, बरस बराबर जाम।
बिन बरसे तव नेह-रस, सब रस रूखे राम!॥१८३॥

मात-हात होनी नहीं, छोनी-भूषन भ्रात!
बाप-रजा पालौं तितै, परजा पालौ तात॥१८४॥

पितु, भूपति, प्रिय, प्रेम-वस, तृन-सम तजिगे गात।
उचित कहां तजिबो हमें?, बात तात! ता तात॥१८५

१ खाना। २ विचरना (फिरना)। ३ आपके चरणोंसे वियोग।

बृथा जात जो तात-पन, बृथा जात सो जात।
तात-घात-पातक लगै, तजे तात-पन तात! ॥१८६॥

सब रूरे जा बिन बुरे, साईं-सखा सुजात।
धर अंबर सत सों रहैं, बिन सत बिनसत तात ॥१८७

धर फूटै टूटै कुधर, खूटै दिन अरु रैन।
तन छूटै छूटै नहीं, वा मुख छूटै बैन ॥१८८॥

पितु आयसु करि आयहौं, अहो भरत! सुख दैन!!
सोच तजो धीरज धरो, भरो न नीरज नैन ॥१८९॥

पार सुजस तव सिंधुको, पायहिं गाय न कोय।
पार भरत! भव सिंधुको, पायहिं गायन लोय ॥१९०॥

देयहु बीर! बिसेस कर, या दिस सुरति सुदेस।
लेस कलेस न ले सकै, कोसलेस-प्रिय देस ॥१९१॥

कियो तिलक[1] जग-तिलकको, भरत चले परिपांय।
सरन पाय पद[2] पीठको, बिपद पीठ दे जाय ॥१९२॥

---

१ राज्याभिषेकका तिलक। २ पावड़ी।

गई बहोर गरीब-हित, पत राखन सत-धाम ।
बिगरी बात बनायबो, तुम बिन बनै न राम ॥१६३॥

देखे मुख वह कौनको, देखे मुख सुख-धाम ।
सुख देखे देखे न दुख, जित तुम देखो राम ॥१६४॥

तौ जोते हम दृगनसों, तो छवि आनँद-धाम ।
चित्रकूट नगके कहूं, खग मृग होतं राम ! ॥१६५॥

दास पियास न मारिहो, वहु विसास मन साम !
दरस आस तनमें अरे, सास रहेंगे राम ॥१६६॥

सत-कारन धारन-धरम, गहन सार संसार ।
धन पावन धरनी करन, भयो भरत अवतार ॥१६७॥

कीरति सरिता भरतकी, भरत सकल संसार ।
अटति नहीं उभकति रहै, हरि-उर-उदधि-मझार ॥

भयो सुचीकन भरत घट, राघव-नेह निराट ।
अब वामें भेदि न सकै, विषया-रसकी छांट ॥१६९॥

तज राजस सिर सज जटा, भजत राम सम भाय ।
आसन दिढ़ आसा लिये, राज भरत मुनिराय ॥२००॥

चक चकई नलिनी नलिन, अवध नारि नर दाम ।
काहू विध काटत रहैं, रात विरह रवि राम ॥२०१॥

नेह मेह उमड़ै जबै, चवै सुरस दृग दोय ।
हरि-यारीके[1] धरन पै, हिय हरियारी होय ॥२०२॥

पिया पियाला राम-रस, धाम कामके तैन ।
काज इलाजन सों गए, तन सुधि तनक तिन्हें न ।

बेदराज ! बे काज सब, अंजन करो अनेक ।
झरन झार इन दृगनकी, हरन हार हरि एक ॥२०४॥

सकुचत पर-वधु-मुख-विधुहिं, खिलत मिलत हरि सैन
मोमत तो ते ही जलज, सलज सनेही नैन ॥२०५॥

लातो लेख लिखाय जो, रे ललाट विधि-ऐन ।
तौ रहतो रघुवीरके, पायनमें दिन रैन ॥२०६॥

रुख रूखो संसार सों, करत सामुहे हांक ।
सानी राम सनेहकी, छानी रहै न छाक ॥२०७॥

१ भगवत्प्रीति । २ हरियालो ।

राम सनेही सजनकी, यह गति जानि परै न ।
उरमें भरे अनंद रस, नैन झरैं दिन रैन ॥२०८॥

जल मोचन [1] मोचन [2] करो, लोचन ! सोच न सार ।
अवधि [3] गए अवलोकि हौं, अनवधि [4] सुख-आगार ॥

---

१ छोड़ना । २ छोड़दो । ३ मुद्दत । ४ असीम ।

श्रीमद्रामरसामृतसिंचित अमृतसतरातिकायां कल्याणकल्पलतिकायां
समाप्तोऽयं द्वितीयोऽवधकाण्डः ॥

अरण्य काण्ड।

वनवास प्रसंग।

सघन कुंज, सुरभी समय, सुख समीर सरि तीर।
मधुर बोल बोलत विहग, विहरत सिय रघुवीर ॥१॥

कर [1] कुसुमनकी दाम जो, कर-कुसुमन [2] सों राम।
सुमन [3] धरी उर भामके, सुमन [4] धरी उर-धाम ॥२॥

चित्रकूटके कंकरनि, भेंटिय भाग जु भूरि
चिंतामन वारिय वहां, चिंता मनकी चूरि ॥३॥

चातक, मोर, चकोर, सुक, सारस, हंस, सहेत।
ईठ निहारत ढीठ ह्वै, दीठ पीठ नहिं देत ॥४॥

मुनिजन-मन सुमुदित करत, हरत ताप हित-काज।
धन धन धरनी पग धरत, वन विहरत रघुराज ॥५॥

राह निहारत रहत हौं, वा दिनकी सब जाम।
मो मन-वन पावन करन, कबहुं रहोगे? राम! ॥६॥

---

१ बनाके। २ हाथ। ३ प्रसन्न मनसे। ४ सन्मतिवाले।

अघ-अहेर कब हेर हौ ?, कुटी करो उर ठाम।
मन-वासी हुइहौ कब ?, हे वनवासी! राम! ॥७॥

कुटी तटी-गोदावरी, पंचवटी प्रभु-धाम।
रहरे चित! चिंतवन करत, रमे रहैंगे राम ॥८॥

प्रान जाय तो जाय पै, प्रानि न जाय सताय।
उन संतनके दरसकी, तात! तरस नहिं जाय ॥९॥

सुर न सुखी सुर-लोकमें, भू न सुखी भूपार।
लगन लगाई अलग सों, साधु सुखी संसार ॥१०॥

सूपनखा मोह प्रसंग।

जोवनमें क्यों वन वसत ?, नेह-निगाह निवाहि।
भोग-जोग हौ भावते!, जोग-जोग तुम नाहिं ॥११॥

चित तो सँग रहनो चहै, कहनो करै न काम।
छवि-फुलवारे! सांवरे!, रवि-कुल वारे राम! ॥१२॥

जास वदन छवि-सदनलखि, मदनमद न ठहरात।
वर[1] बनाय वह वर वरनि!, सुलख लखन लख गात

[1] पति।

दई [1] लखन ! यह लोनई, दई [2] मोहि तो हेतु ।
तो नख सिख लख चखन सों, झख मारत झख-केतु [4] ॥

हार निहार निहार जग, नहिं अनुहार [5] निहार [6] ।
दीने मुनि मन हार जिहिं, उन-उनिहार [7] निहार [8] ।

मन न देह छन-सुखनमें, छन मन देख विचार ।
साम सुरति सों सुरति कर, राम सामि सुख कार ॥

शूपनखा विरूपन ।

काम कोह छल छांड़के, करो राम रति चाहि ।
नहिं तौ हांसी होयगी, नाक रहैगो नाहिं ॥१७॥

शूपनखा रावण संवाद ।

रात दिवस रातो रहत, भैया ! भोगन मांहिं ।
दिन दिन जे बैरी बढ़त, सो सुधि नेकौ नाहिं ॥१८॥

को जीव न जीवन चहै, काहि न सांस सुहाय ।
कियो जियत दससीस-अस, वह तू बहन ! बताय ॥

१ दी । २ ईश्वर । ४ झखकेतु कामदेव । ५ उनके समान दूसरा । ६ देखा । ७ चेहरा । ८ तू देख ।

दो० रघुवर सांवर गवर, सँग वर वरनो तीय ।
जाकी रती[1] रतीक ते[2], दुरती[3] रती[4]-रतीय ॥

ना नारी ना निरजरी, ना नागनकी धीय ।
ऐसी और न सुंदरी, तीन लोकमें तीय ॥२१॥

अति लाघव[6] राघव सुलघु, करो वार करवार[7] ।
भैया! ना कछुवे रह्यो, नाक छुवे तरवार ॥२२॥

चढ़े सहाय सहाय लै, खर दूखन त्रिसिराहु ।
भिरत गिरत देखे सबे, फिरत न देखे काहु ॥२३॥

राम धरत धनु सामुहें, परत राति चर-पांति ।
बान-जान जान न परत, जान[8] जानकी भांति ॥२४॥

रावण मारीच संवाद ।

हरि सीताको आनिवो, उर यह आनि विचार ।
मृग बन वा वन जाव तें, जा वन राम विहार ॥२५॥

वाहि भुलायो चहत हो, तुम भूलत हो साम ।
अहो जहां मम परत चख, तहां परत लख राम ॥२६॥

---

१ कान्ति । २ रत्तीभर (थोड़ासा) से । ३ छुप जाता है ।
४ कामदेवकी स्त्री रतिकी । ५ कान्ति । ६ जल्दी । ७ तलवारका ।
८ जीव ।

रावण-मारीच संवाद प्रसंग।

हरि सीताकों आनिबो, उर यह आनि विचार।
मृग वन वा वन जाव तें, जा वन राम-विहार ॥२७॥

वाहि भुलायो चहतहौ, तुम भूलत हौ साम।
अहो जितै मम चख परत, तितै परत लख राम ॥२८॥

कहत 'न' रहत न तन इतै, मन! खड्ग-कर मति खोय।
बलिहारी मम मरन की, राम-करन करि होय ॥२९॥

मायामृग प्रसंगः।

सारँग धर! सारँग रुचिर, आनिय मो हित पीय!
सुभग सुरंग कुरंगकी, चरम परम रमनीय ॥३०॥

बहुरँग चंचल चपल अति, गति विचित्र छल-धाम।
कंचन मृग की भाँति मम, मन मृग मारौ राम! ॥३१॥

सीतालक्ष्मण संवादः।

हा कहि आरत नादसों, तुमहि पुकारत धीर।
विपद परी तुव वीरमें, बेगि निवारौ वीर! ॥ ३२॥

मात! न सुर[२] यह भ्रातको, सुर[२] आसुर छल-धाम।
जोतिअजीत अदीन जिमि, रन-अजीत तिमि राम॥३३॥

सकल सूर जगके जुटैं, जुरैं आन संग्राम।
जीते जायँ जरूर वे, जीते जायँ न राम ॥३४॥

---

२ स्वर।

कुवचन कहे विदेहजा, वहे लखन-उर बान ।
श्राप-लीक करिके चले, जितै भानु-कुल-भान ॥३५॥

सीता-समीपे यती वेष रावण आगमन तथा संवाद प्रसंग

भले दरस द्विजवर ! दिये, किये कृतारथ आज ।
ए आछे फलफूल लै, सफल करो महाराज ॥३६॥

बड़ लोकन की लीककों, मति लंघो मतिमान ।
खरन धरन बहिरन हरन, धरन सुताको जान ॥३७॥

सोवत जेंवत सुरपति न, भरसुख जाके भीत ।
जिहि लखि थिरचर थरहरत, सो रावन मैं सीत ! ॥३८॥

अमर अलभ आनंद वे, मो सह सेय सुदेश ।
भूलि जायगी भामिनी, कानन-जात कलेश ॥३९॥

उनमत लौं मत जलप जड ! मति भ्रम तव मति मारि
सीत नारि तोरी नहीं, सीत नारि है तोरि ॥४०॥

अमर उमाहैं दरस कों, नित चित चाहैं बाम ।
सो मेरे प्यारे पती, राज-दुलारे राम ॥४१॥

सीताहरण प्रसंग

हा ! देवर ! तुम दूरह्वौ, नहिं जानन मैं जात ।
करनीके विधि फल दिये, कर नीके विधि तात !॥४२॥

। तेरी नाड़ी शीत [सन्निपात] में है अर्थात् तू पागल हुआ है ।

देखत नहिं मो दुख महा, विपद-विदारन नाम।
भाखत दुखिया दीन सो, राखत काहे न राम!॥४३॥

कजलोयन जोय न सकत, लगत डाभ पग-चाम।
कहाँ विहारी आजु वह, रहम निहारीराम!॥४४॥

प्रबल पीर पाकी हिये, बेला बाँकी बाम।
परी न भाँकी रावरी, रसना थाकी राम!॥४५॥

वारन की सी वार यह, वारत करौ न वार।
वार वार प्रभु! पाय हौं, वार करनकी वार॥४६॥

दंड कवन अघके हमें, दंडक वन! यह शोक।
छनयक छनदाचर! ठहरि, हरि आये अवलोक॥४७॥

भेख देख मति भूलियो, मतिसों करियो कूत।
अरे चलन अवधूत[1] सी, लगे चलन अव धूत[2]॥४८॥

ज्यौं तन त्यौं मन सों सदा, हरो रहैगो तात!।
कहहि कीर! रघुवीर सों, मो विपत्ति की बात॥४९॥

जाति निहारी जानकी, दुखित लिए दुइ नाम।
ता दिन ते सीख्यो मनो, सूआ 'सीता राम'॥ ५० ॥

१ जोगी २ धूर्त्त

जटायु आगमन

महा माय सिय भगवती, मति रावन ! ले जाय।
चंड मुंड[†] उड जायँगे, रक्त बीज[‡] बहि जाय ॥ ५१॥

अघ जावत अनुमानिये, संत-समागम भाय।
घर जावत तब जानिये, पर-घर-पर जी जाय ॥ ५२ ॥

(यहां जटायु रावण का युद्ध जानना)

अशोक वाटिका मध्ये सीता स्थिति

वह विन-विन छनमें करत, जिन-विन छन हुन चैन।
कैसे पेखै प्रेम-पथ, नहिं अदीठ कों नैन ॥ ५३ ॥

सब विधि संजत राम-रत, भूलि रही भव-भोग।
प्रीतम विरह-विजोगमें, सीता साधति जोग ॥ ५४॥

राम लक्ष्मणका आना सीताको न देख राम का विलाप

नीच मीच सम जानिये, यामें रती न वीच।
एक घरी जा वस पर्यौ, मर्यौ तुरत मारीच ॥५५॥

परी झोंपरी सून यह, परी करी यह घात।
कहाँ गई नृप-नंदिनी, भयो कहा यह भ्रात ! ॥५६॥

निकसति सति न अकेलि वन, गई कि ढूँढन मोहि ?
कै काहू खल-कर परी !, हरी मरी वा होहि !! ॥५७॥

जो न मिलैगी जानकी, कहा करैंगे ? भ्रात !
मो जीवन-नीव न जगत, ता सीता विन तात ! ५८॥

† प्रचण्डशिर वा एक दैत्य ‡ लोहू, वीर्य वा एक दैत्य।

हा जानकि ! जड़ि जानकी, भई अजान सुजान !
कहा जान दरसति नहीं ? जान चहै मम जान ॥५९॥

रामजीको लक्ष्मणका समझाना

दुख-मोचन ! कीजत कहा ? सोच न सीझत काम ।
विपद निवारन होयगी, वार न लागे राम ! ॥ ६० ॥

तुम अधीर अस होत हौ, नर नाहर ! जग-नाह !
प्राकृत जन आपद परे. कहो करेंगे काह ? ॥ ६१ ॥

देव ! न दुख काकों दहन, धीरय धीर धी-धाम !
समय परे आपति सहत, रवि राकापति राम ! ६२ ॥

सजन-बिछोहन बन-बसन, प्रिया-वियोग विराट ।
कहौ लला ! कैसे टरैं, लिखे जु लेख ललाट ॥ ६३ ॥

भूल करत जे नर चहत, मृगया कर कल्यान ।
एक हरिन के मरन ही, सीता-हरन प्रमान ॥ ६४ ॥

मृग दृग हूँ नहिं देखते, जो जानत यह भाय !
मृग मारन कों दृग दिये, मृग-दृग वारी जाय ॥६५॥

बिछुरे देत मिलाय तुम, मुरझे देत खिलाय ।
विभो ! विभाकर ! कर मया, मो कों प्रिया मिलाय ॥

किन आरन में रन कियो ? किन कारन मन-नंद !
लाज लखन ! ए लखि परत, लाल लाल रज-बुंद ॥

तात ! कहा तव तन भयो, पीर न पेखी जाय ।
कहौ गई सीता कहां ? जो कहि सकौ जटाय !॥६८॥

दसा दसानन यह करी, हरे ! हरे सिय जात ।
हरी ! हरी ! बिलपति गई, परी पराये हात ॥ ६९ ॥

प्रभु ! रावन मानी नहीं, अति मानी दस सीस ।
बक्यौ जक्यौ रन करि थक्यौ, कछु करि सक्यौ न ईस॥

तेरे जगत जटाय से, भूखन भूमि ! कितेक ।
देखैं आप अनेक दुख, पर-दुख सकैं न देख ॥ ७१॥

करनि करी निज करनिसों, गयो गीध हरिधाम ।
उर लाये खग नेह भरि, दृग भरि लाये राम ॥ ७२॥

वृक्षलतादिमें सीताको ढूँढ़ना

[1]बंधु ! बिलोकहु सघन वन, मिलत डारसों डार ।
ज्यौं सज्जन हिलमिल रहत, लहत सुजस संसार ॥७३

[1]सहत वात घन घाम हिम, मौन रहत इक टेक ।
अपनी विपद बिसारिये, बिरछन के दुख देख ॥७४॥

---

1 लक्ष्मण वचन।

' सहि साँसति राखत सरन, सम सींचत दुख देत।
देह नेह तजि तपसि तरु, लाभ जनम को लेत ॥७५॥

' पाहन हनेहुँ देत फल, अंब ! अंब तव रंग।
कह रसाल ! सम रस भर्यौ, कर्यौ कहाँ सत संग

' धन तरु ! तेरी संपदा,जो परके हित-हेत।
जात तात ! जनि सोचियो, दई दया करि देत॥७७

' पर उपकारी पुरुष कौं, सुकृत सहायक भ्रात !।
बिन सींचे हूँ बिरछ ए, रहत हरे दिन रात ॥ ७८ ॥

' उपजे पर उपकारकौं, हौ तुम पेड़ ! पुनीत।
जो जानौ कहुँ जानकी, मोहि बखानौ मीत ! ॥७६॥

' हिलत वात-आघात ते, नटत किधौं ए तात !
कै अपनो दुख देखि कै, धुनत माथ धर-जात।८०॥

भूमि-सुता की सोधि को, आदि इनहिं को काम।
किए अचर जड देव जड, तरुवर तरपत राम !॥८१॥

' तरु ! कत डारत पात ए ? कै यह असुआ पात।
कै बिछुरी तुव वल्लभा ? तुहूँ बिजोगी ? तात ! ।८२

लखन बचन ' राम वचन

†पात पके ते परत हैं, नव सलगत जगमित्र !
सुतरु बतावत सुगुरु लौं, जग चरित्र को चित्र ॥८३॥

†तात ! न संत वसंत यह, हमैं असंत लखात।
पत झड़ जोवन चढ़त त्यौं, बढ़त त्रिपत झड़ जात ॥

†ग्रीसम सूकहिगो गरो, यह वसंत दिन दूक।
टूक करेजा मत करे, कोकिल धीरे कूक ॥८५॥

†कोकिल ! तोसों का कहैं, जो जग को यह ढंग।
या वसंत के राज में, को नहिं पलटत रंग ॥ ८६ ॥

†नार ! खुमार निकार लै, मार मार सर मार।
दुखी दई मो कों कियौ, सुखी जियौ संसार ॥८७ ॥

†भव नहिं मार ! गमार ! ए, भव-धनु भंजन हार।
श्री अवधेश कुमार हैं, नीके नेक निहार ॥ ८८ ॥

पूछ पुरंदर-पूत सो, इन सारंगन रंग।
एक वेर शंकर दह्यौ, अब का चहत अनंग ! ॥ ८६ ॥

शबरी की भावना तथा राम दर्शन

राम पधारं आज जो, उड़ि वायस ! वा डार।
जो तू कहै सु हौं करूँ, विसरूँ नहिं उपकार ॥६० ॥

---

† राम वचन ‡ लक्ष्मण वचन

नेक निहारौ हे विहग ! आवत कहूँ लखात।
दसरथ-सुत देखे विना, जनम अलेखे जात ॥ ६१ ॥

सो साजन सोई हितू, सो सुख-सरजन हार।
राम बनातें आवते, हौं ताकी पनहार ॥ ६२ ॥

राम दरस-मुदरस भरी, सवरी भँवरी भाय।
कलप कलपकी कलपना, पलमें गई पलाय ॥ ६३ ॥

रामलक्ष्मणका शवरीके आश्रममें पधारना

नहिं दाडिम नाहिं दाख अस, नहि रसाल-रस हेर।
मधुते मधुर सुधाहु ते, सरस बंधु ! ए बेर ॥ ६४ ॥

लखन ! चखन[1] आए कहूँ, लखन[2] चखन[3] अस फेर।
भिलनीके संचित किए, भल नीके ये बेर ॥ ६५ ॥

अति मलीन तिय हीन मति, नीच दीन अघ-ठाम।
शुचि साहिब विन आपसे, को रुचि राखै ? राम ! ६६॥

नहिं देखौं विद्या विभव, नहिं कुल रूप न नेम।
भगति भाव-वस भामिनी !, मोहि पियारौ प्रेम ॥६७॥

रामलक्ष्मणका आगे पंपासरोवर पधारना

नलिन नैनि सुमिरों सिया, नलिन नैन सों पेख।
नैन सरोवर से भरे, तात ! सरोवर देख ॥ ६८ ॥

१ चखनेमें २ देखनेमें ३ आंखोंसे । राम शवरी

¹रमा-रमन रवि-कुल-मनी, विमुख होत विनसों जु ।
नहिं सरोज ! तेरो नसहि, रोज रोजको रोजु[१] ॥९९॥

²सीतल कर संचारिवौ, चांदनि चैन सुदेश ।
कहौ तात ! कैसे करै, गत विना राकेश ॥ १०० ॥

¹खल भूलत भलपन जथा, अनभल भूलत संत ।
सीता-विरह विसारिये, कछुक काल जग-कंत !॥१०१॥

¹ राम वचन ² लक्ष्मण वचन १ हमेशाका मुरझाना

श्रीमद्रामरसामृतसिंचित अमृतलतातनिकायां कल्याणकल्पलतिकायां समाप्तोऽयं तृतीयोऽरण्यकाण्डः ॥

नोट :—इस काण्डमें नं० २७ और नं० २८ ये दो दोहे भूलसे दोबारा छपे हैं ।

अथ किष्किन्धाकाण्ड ।

हनुमानजीका मिलना

लखि लोचन सरसात अति, हेरि हियो हरसात ।
संपति-पति दरसात हौ, कत वन विपति नसात ?१॥

राम लखन दसरथ-सुवन, वन आए पितु-वैन ।
सिय सुंदरि निसिचर हरी, ताकौं ढूंढत सैन ! २ ॥

प्रभु-परिचै जो सुख भयो. को सु करै अनुमान ।
पगनि लगे लगनि हि पगे, उमगे हिय हनुमान ॥३॥

रहौं चरन लपटाय के. सदा सरन सुख-धाम ।
कौन भांति तुमको भजूँ ? कहो कृपानिधि राम !४॥

नाथ ! पधारो कर कृपा, सकल सुधारो काम ।
दरिद सहारो दीनको, विरद तिहारो राम ॥ ५ ॥

पवन-सुवन-मन मुद भरन, हरन सरन जन-पीर ।
कौन बन्धु सुग्रीवको. दीन-बंधु रघुबीर ॥ ६ ॥

सुग्रीव-समागम

अरि तव संहारहौं अवसि, दहौं राज कलित्र ।
सकल सोच तज धीर धर, मित्र-तनय ! मम मित्र ।७॥

मीत! प्रीतिकी रीतिकी, नीति नलिन ते चीन।
विकसत मित्र-उदोत ते, ता विन होत मलीन ॥८॥

इत बैठे रघुवीर हम, दिन दुएक की बात।
कुररी सी विलपति रही, लखी गगन-मग जात ॥९॥

सरवस परवस वरवसी,हरी! हरी! कहि बानि।
झटपट पट पटकत गई, छटपटाति झपटानि ॥१०॥

सुने सुवैन सुकंठ के, कंटक लगे कुठाम।
पारथिवी के पट परखि, निपट दुखी भे राम ॥११॥

सीताका उत्तरीय, भूषणोंकी झंकार, रामवचन

भो भूखन! भाखौ न कछु, विरह-विथाकी बात।
तजे प्रथम तुमते हमें, कहौ कियो का जात? १२॥

कब मुख कमल विलोकिहौं?, कब सुनिहौं पिक-बैन।
कब सीता मिलिहैं? सखे!, सीतल हुइहैं नैन ॥१३॥

सेव करैं सेवक सबै, सोच विमोचिय स्याम!
बेगि मिलैगी मैथिली, धीरज राखौ राम! १४॥

रामने बालीको मारा, बालीका उलहना

दयौ कहा सुगरीव अरु, लयौ कहा मैं छीन?
बिना बैर बधि बीरवर! भली भलाई लीन ॥ १५ ॥

तो मन हरनी जिन हरी, तिहि धरि देनौ आन ।
नीच हरी[१] की सीखते, हरि ! हरि लीने प्रान ॥१६॥

हुई तिहारे हाथ सों, नाथ ! नहीं यह नीति ।
आँख-ओट रहि चोटकी, राम ! कवन रन-रीति ? १७

यह सुनाम संसारमें, अरु तोरे ए काम ।
महाजनन बिच बैठके, कहा कहैंगो ? राम !॥ १८ ॥

निरगुन देखत हों निपट, जग गुन गनत अलेख ।
जगत ठगतसे लगत हो, भांति भांति धरि भेख ॥१६॥

सरन-त्रान अरु दीन-हित, पन मेरो सब भांति ।
दियो दंड तो दुरितको, वालि ! बूझि यह बात ॥२०॥

छन दुख सहि तें लूट हैं, सुख सु अखूट अडोल ।
तोलि भालि भलि भांति सों, वालि ! बोलिये बोल ।२१

राम ! हमारी चूक लखि, कृपा न चूको आप ।
हम तौ बाल बिमूढ हैं, तुम प्रवीन मा बाप ॥२२॥

बधे न सूरज[१] बैर सों, गाढ गहि कर थाम ।
अंगज[२] अंगद-अंगके, तुम रखवारे राम ॥ २३ ॥

१ सुग्रीव २ पुत्र

अब राजा सुगरीव है, जुवराजा तव लाल ।
बालि ! तिहारे बाल को, बाल बाल रखवाल ॥२४॥

बालिकी अंतक्रिया सुग्रीवका राज्याभिषेक हुआ ।
रामका प्रश्रवण पर्वत पर वर्षाऋतु बिताना ।

मिटी गरज [१] घन गरजते, लखन ! लखहु गुन-चोर ।
विपुल चंद मति मंद धरि, मोहि डरावत मोर ॥२५॥

सदा न रहिहैं स्यामघन, देखत हुइहैं दूर ।
सुमर राम घनस्यामकों, एरे मूढ ! मयूर ! २६ ॥

घटत बढ़त विनसत घटा, पल पल पलटति जात ।
जोवन जीवन विभव इव, नहिं थिर तात ! लखात ॥

मधुर पखावज मेघ-धुनि, चपला नाच सुचीत ।
सारंगी कलकंठ रव, रच्यौ सरस संगीत ॥ २८ ॥

कै सरोज-संकोच ते, कै विसराम विहंग ।
उड़त उलूको देखि कै, पगो गिनौ पतंग ॥ २९ ॥

संत सरस घन ताप-हर, समरस्य बरसत जात ।
पाखंडी कारे पटल, टोरे डोलत तात ! ॥३० ॥

हम सँग दुख, सुख करि गन्यौ, त्यों हम जा सुख जाहि
रति-निंदनि नृप-नंदनी, आजु कहां वह ? होहि ॥३१॥

१ खुशामद

जो बरसा बरसति बहूँ, जो कहुँ अहै सजीय।
हम सोचत सिय त्यों हमें, सोचति हुइहैं सीय ॥३२॥

अस बरसा-निसि बीर के, बिहरि जात उर बीर!
किती भीर वा भीरु पै, को परखै वह पीर ॥३३॥

मुदित मोर, धर करि हरी, भरि सर, बननि बनाय।
रस, सस, सुख दै सुजस लै, बादल गये बिलाय ३४

शीत निवारेउ घाम करि, घननि निवारी घाम।
ताहू पर अब शरद ऋतु, विधिकों नहीं विराम ॥३५॥

शरद-शरवरी कहन कों, दरद दाह की रात।
अहो! कहावत सीतकर, ताप-भीत-कर तात! ३६ ॥

प्रिया अलोनी पिय बिना, प्रिया बिना पिय जान।
क्रिया विना जिम ज्ञानके, क्रिया बिना जिम ज्ञान ३७

सीताकी सुधिके लिये श्रीरामलक्ष्मणका सुग्रीवको स्मरण करना

भैया! या भू पर भरे, निरे नेह करतार।
पै विरले ही विश्वमें, नेह-निवाहन-हार ॥ ३८ ॥

अभय भूप भानुज कियो, नहिं भल भयो सुनाथ!
आपनि आपद बिसरिगो, आपनि आपद साथ ॥३९॥

का मरकट की मित्रता, किरकट-वरन-विलास।
जिनके बल विसर्यो विपत, विपत विसरगो नाम ४०

कौन भलाई कीशमें, ईश ! जु अस आचार।
पेट भरत ना पेड़ की डारत डार विडार ॥४१॥

कहा सोच सुगरीव कों, सुख को सीत समीर।
पीर परे ही लखि परत, लखन ! पराई पीर ॥४२॥

हनुमानजीका सुग्रीवको रामजीका स्मरण कराना।

सुंदरि संपति साहिबी, इनको मोह महन्त।
कबहुँ करी है मिंत तैं, चिंत-हरनकी चिंत ॥ ४३ ॥

देख सके नहि मीत-दुख, खरी मिताई राम।
देखत नहिं तुम मीत-दुख, मृषा मिताई नाम ॥४४॥

या मायाके मोह जन, भूलि जात भगवंत।
तातें संपति साहिबी, संतत निंदत संत ॥ ४५ ॥

कहा भयो जो भट भये, भूप भये किन काम।
जायहि जाये जोन वे, जो न रिझाये राम ॥ ४६ ॥

हरि-हित हरि-पति हरि-चमू, पठई सिय-सुधि लैन।
पठवत लंकहि पवन-सुत, कहि अस करुना ऐन ।४७।

जहाँ चाँद बिन चाँदनी, बादल बिन बरसात
जलन बिना ज्वाला जहाँ, प्रिया प्रतीनो तात! ॥४८॥

सुधा-मई बसुधा-सुता, सील सुरूप सुहाति
सीय न छन छानी रहै, कमनीयन की पाँति ॥४९॥

अवस तात! अवलोकिहो, कहौं सगुन सुभ जोय
जियकी सुधि कछु ना रहै, जब सियकी सुधि होय ॥५०॥

देह-दसा दरसाय के, कहियो हिय को हेत
दसा अनूठी देखि हो, तात! अँगूठी देत ॥ ५१ ॥

श्रीमद्रामरसामृतसिंचित अमृतसप्तशतिकायां कल्याणकल्पलतिकायां
समाप्तोऽयं चतुर्थो किष्किन्धाकाण्डः ॥ ४

अथ सुन्दर काण्ड

हनुमान्‌जीका लंका प्रवेश। सीता दर्शन।

रामचरन रुचिरन सुमिर, सब सहचरन सुबोधि
बल अपार अंजनि-सुवन, पहुँच पार पयोधि॥ १ ॥

शोभा-मय सुवरन-पुरी, विवरनसी दरसाय
ज्यौं हरिके सुमरन विना, सुवरन-वरनी काय ॥ २ ॥

जनक जनक दसरथ ससुर, रामचन्द्र से नाह
सो सीता परवस परैं, वाह विधाता! वाह ॥ ३ ॥

चतुर मिले ज्ञानी मिले, अकरन के करतार
हेरतहूँ न मिल्यौ कहूँ, विधि-लिपि को हरतार ॥४॥

वह पद्मन वर वासना, सुमन-संग सुख दानि
विछुरे इतै बबूल-वन, भमरी कितै भुलानि ॥ ५ ॥

बंध छुड़ावनहार वह, एक दूसरो नाहिं
रटै राम के नामको मयना पंजर माहिं ॥ ६ ॥

हनुमान् वृक्षपर बैठे हैं। रावनका आना। रावण सीता संवाद।

सुख सारे संसार के, भजे सहजही तोहि
एक वेर इन दृगनिसों, मोहि मयाकरि जोहि ॥७॥

थल जल चहै न चातको, हरियल धरनि न धाय
खिलै न नलिनि खद्योत ते, पिक न निबौरी खाय ॥८॥

जग मोहनि ! अस जनि कहै, जनि बढ़ाय अति रोस
अबकृपानधारनकरो, तोर धरो धर सीस ॥ ९ ॥

दसकंधर ! मो कंध परि, एक करहि दुख-हानि
कै कृपान को पानि तव, कै कृपाल को पानि ॥१०॥

धरम-धुरंधर अवतरे, हरन हेतु भू-भार
जगत-पती मेरे पती, बिपति बिदारन हार ॥ ११ ॥

अगुन अमान अमानस जु, बिपति दीन पितुमात
ता अनाथ रघुनाथको, कौनकहतजगनाथ ॥१२॥

पाप रूप ! व्यापत बृथा, तोको दाप अमाप
अरे ! बढ़त पर-ताप के, घटत सबै परताप ॥ १३ ॥

सती निदोसा बिरहिनी, उपबासिनी न दाहि
जो कलपावत काहुकों, सो कल पावत नाहिं ॥ १४ ।

हरि आनत परतीन कों, मन मानत हौं सूर
जब तब रावन ! परत है, भरत के सिर धूर ॥ १५ ॥

मंदोदरी रावणको समझाती है ।

भरता ! भूलतु हौ कितै?, उर तारो कछु आप
करता माफ न करि सकैं, परताए को पाप ॥ १६ ॥

द्व दुकूल सों नहिं दटै, प्रगटै पाप तुरंत
नेक हु शरमाये नहीं, किन भरमाये कंत ! ॥ १७ ॥

तपि तपि केते खपि गये, थपि थपि उथपि अनंत
कंत ! करौ रति कंत सों, अंत एकदिन अंत ॥१८॥

धरनि-हरन सुर-थरहरन, हिरन-नैन कित आहि
हिरन-कसिप हरि-नख-हयो, नख निरखनको नाहिं १६

रावण गया । सीतात्रिजटासंवाद ।

पति-दरसन दुरलभ भए, विपति सही नहिं जाय
बहन ! दहन करि देह मम, नितकी दहन मिटाय२०

अली ! जली या विरहते, भली अनल की झार
एक बार बारहि अनल, विरहा बारहि बार ॥ २१ ॥

मन मलिनी नलिनी ! न हो, दरस दिवाकर देत
चतुरानन विरचौ विरह, प्रेम-परिच्छा-हेत ॥ २२ ॥

राम-रमा ! धीरज धरौ, दुख-पाछे सुख होय
प्यारी ! रस सों रहित सो, कारी घटा न कोय ॥२३॥

त्रिजटा गई। सीताका विलाप।

परसि आय मोकों पवन, परसि पाय-प्रिय-पीव
पिव प्यारे पै पवन ह्वै, तू उड़िजा रे जीव ! ॥ २४ ॥

दई ! सँभारो देह यह, जारो यों न जियाय
मर्यौ जाय पै विरह मं, जियत जर्यौ नहिं जाय ॥२५॥

विधि के घर विरहीन पर, करुना रही न कोय
सुधा करहु कहलाय सो, हाय ! हलाहल होय ॥२६॥

रटति रहति चातकि सदा, जाचति और न धाम
तुम बरसत तरसत रहै, सोहत नहिं घनस्याम ॥२७॥

जो ऐहौ अति वेर करि, देहौ रहै न सेस
कब मोकों देहौ दरस, ऐहौ ! श्री अवधेस! ॥ २८ ॥

हनुमानजी का प्रगट होना। सीता हनुमान संवाद।

कोसलेस सीते ! कुसल, कुसल कहाए तोहि
दुख हरि सुख करिहैं सकल, मात! विकल मत होहि२६

पवन-पूत हनुमान हरि, राम-दूत मुहि लेख
करुनाकर निज कर दई, मात ! मूँदरी देख ॥३० ॥

दुख-सागर वहतो सुमिर, सुत ! मूँदरी सुभाव
करुना कर पठई किधों, करुनाकर वर नाव ॥ ३१ ॥

साँचे हूँ यह नाव है, राम-नाम मय माय
भजत तिते तरजाय हैं, तजत तिते तर[1] जाय ॥३२॥

नाव रामके नाम की, या समान कछु नाहिं
हौं मुखधरि जलनिधितर्यौ,जन जगनिधि तरि जाहिं३३

सदगति साई देत है, विपद विदाई लेति
राम-मंत्र के मित्रकों, मुकति निमंत्रन देति ॥ ३४ ॥

बालम-विरहानल जलत, जियकों कल पल है न
आस-पास राख्यौ पकर, निकरन देत न नैन ॥ ३५ ॥

विथा कथा कासों कहौं, कहे न जानै कोय
वरसतहू तरसत रहैं, विन दरसन दृगदोय ॥ ३६ ॥

सही जात ना जातना, हंस[2] उड़ौ ही जात
चाह चरन जलजात की, जात जात रहिजात ॥३७॥

वानर वर! सानुज सुखी?, अखिल लोक-अवलंब
करुनाकर सब कर सकत, सुत! कत करत बिलंब ३८

सुख दुख देखत एक से, रुख रूखे हित वाम
जग त्यागे जागे रहत, वीतरागलौं राम ॥ ३९ ॥

१ नीचे।　　　२ प्राण वा पक्षी।

लखन कहत तब सुधि लहत, सीत मेह के घाम
मात! रावरे बिरह में, विरह-बावरे राम ॥ ४० ॥

चित उन तो चितउन लगी, आन भान नहिं नेक
जब कर गहि कहियहि कछू, वे कछु करत विवेक ॥४१॥

कहत बने मो पै नहीं, रहत जु रहनि रमेस
वहत रहे दृग सोत से, कहत रहे संदेस ॥ ४२ ॥

"देखि परी सूनी कुटी, देखि परी प्रिय! तैं न
चैन लै न दिन रैन मन, तबने तरपत नैन ॥ ४३ ॥

नेह-अँदेसा मति करौ, सार सँदेसा एह
प्रानप्रिये! उत प्रान हैं, इत देखन कों देह ॥ ४४ ॥

मनवासिनि! कहँ वसति हौ, जो पाऊँ सुधि सार
पलमें लाऊँ पलन सों, पलहु न लाऊँ वार ॥ ४५ ॥

मुरझे कज विकसित करन, उदय करत नित जोय
करहि तिहारे मिलन को, देव दिहारो सोय" ॥४६॥

अजर अमर तव होहु तन, हरि हिय वसौ हमेस
प्रभु को दयो विदेस ते, अस सुदेस संदेस ॥ ४७ ॥

राखहि रावन-अगनते, जौलग दहै न देह
बात-जात घनस्यामसों, बात जात कहु एह ॥ ४८ ॥

बीतत कछु बीतत कछू, हरि यह जानो नायँ
जननी धीरज लाय मन, जनि लोचन सजलाय ॥४६॥

काटौं तो संकट सहित, संकट सुरन असेस
सब करिसकौं न करिसकौं, बिन आयसु अवधेस ५०

सीतल दृग विकसत हिये, चरन कमल धरि सीस
दिन कर-कुल दिनकर लखूँ, सो दिन कबै? कपीस।५१

सबलौ राम सुजान वे, अबलौं अहैं अजान
अब अबेर मो जानकी, जननि! जानकी! जान ॥५२॥

बन-विधंसि बधि बधिक बहु, मद मरदन दनुजेस
बँधि आयो विधि-आयुधहि, अबध दास अवधेस॥५३॥

रावणका कोप। हनुमानजी का उपदेश।

बरबस जमपुर जायहैं, कर मोसों बरजोरि
कौन हरी! तैं साँच कह, कौन हरी मति तोरि ॥५४॥

रामदूत हनुमान हरि, तोहि मिलन रुति मोरि
श्री हरि की पतनी हरी, कौन हरी मति तोरि? ॥५५॥

बल विभूति जय बंकता, लंकापति ! बहु अंक ।
सून सरिस पाछे पर्‌यौ, सीता-हरन कलंक ॥ ५६ ॥

राम-सरन हुइ सौंपि सिय, राम-सरन को काम
तोहि भलेकी कहतु हौं, रूठे भले न राम ॥ ५७ ॥

इंदु इंद निंदित भए, किए कलंकित पाप ।
भल धरतो काको भयो ?, पर-ती-रति-परताप ॥५८॥

लंक जानकी बात है, जो न जानकी देह ।
हान जानकी जान सौ मती जान संदेह ॥ ५९ ॥

दंड देन रावन कह्यो, पूंछ जरावन वाय ।
जब दव दीनी खलन कपि, दीनी लंक लगाय ॥६०॥

लङ्कादहन वर्णन

राम नाम जामें नहीं, जो खल गन को खेत ।
सो काया कंचन पुरी, दाह होनके हेत ॥ ६१ ॥

कुसल आस क्यों कीजिये, सती जतीन सताय ।
जास-त्रास ते लंक लौं, जलहूमें जल जाय ॥ ६२ ॥

खावनकों पायो नहीं, कछु रावनके राज ।
अनिल-जातके हाथ ते, अनल अघानो आज ॥६३॥

राखस-कुल को राख है, राख होत यह हाय !
जलज दृगी दृग जल लिये, "जल जल" जल्पति जाय ६४

सुधि लै सुख दे सीयकों, सह सहचर सुख गात ।
अघ-भंजन पै जात सो, जयो प्रभंजन-जात ॥ ६५ ॥

हनुमानजीका श्रीरामजीसे सीता-सन्देश कहना ।

पल पल जल झलकत पलन, लोयन जोय न जात ।
दीठ सु सीय-अनीठ अति, नीठ विताई रात ॥६६॥

निकट गए नाहीं रहत, प्रान थानको भान ।
पलकन ढलकन जलकनन, पिघलजात पाखान ॥६७॥

डटे डार देखी दसा, जुगसम बीती जाम ।
सुनत छनक विसरी विपद, भनित रावरो राम ! ६८

जो न चकोरी लौं करति, रामचंद्र ! तव ध्यान ।
तो जरजाती जानकी, विरह कराल कृसान ॥ ६९ ॥

दहन हिये दृग जललिये, सहत त्रास सब जाम ।
कहति "नाथ हा नाथ" मुख, रहति रात दिन राम !

तो वियोग रस वैन वे, पैर उ.वहि वहि कान ।
जलज नैन वे निमिखमें, जलद भए भगवान ॥ ७१ ॥

नन भरी लखि नेन भर, भर आए मो नेन।
अजहूँ भरि आवत गरो, नहिं कहि आवत बेन ॥७२

प्रनति करी विनती करी, श्री रघुबीर ! सबीर !
सुधि न किंकरीकी करी, करी कहानकसीर ? ॥७३॥

जब जयंत वायस बन्यो, हन्यौ चौंच चरनाह ।
कुलिस बन्यौ तृन धनु-तन्यौ, सुदिन करौ सुधि नाह ७४

कोटि कलाधर जगमगें, जगत प्रकासन काम ।
तेरी छवि हेरे विना, रैन अँधेरी राम ! ॥ ७५ ॥

जो करता करतो इतौ, मेरे कर-बस काम ।
पद पद तो पद पद्म-तर, रज हुइ रहती राम ! ॥७६॥

दारिद-दमन दिदार तव, चिदानंद सत-धाम ।
अवलोकत मम पाछिले, पातक रोकत राम ! ॥७७॥

परी जुमेरा जीवकी, खरी टेव अभिराम ।
विन पेखे राजीव पद, राजी रहै न राम !॥ ७८ ॥

भूख न प्यास न नींद दृग, चैन है न विसराम।
मन मेरो निस दिन भमै, तुम विन रमै न राम ! ॥७९॥

मन तेरो सुमरन करूँ, रसना रटे तो नाम
नैन निहारूँ रैन दिन, राह तिहारी राम ! ॥ ८० ॥

चातक मधुप मयूर पिक, दादुर लगन ललाम ।
तेरे गुनकी पांत कों, रटूँ रात दिन राम ! ॥ ८१ ॥

किती दूर सुघरी घरी, सुघर चतुरमुख नाम ।
मुदकर मुख तेरो अमल, रुचि सों निरखूँ राम ! ॥८२॥

हित-राती बाती भई, चित-राती सब जाम ।
रातो आराती भई, अखियां राती राम ! ॥८३ ॥

पीतम ! तो दीदार की, छवि अटकी उर धाम ।
कंचन पुर परबस परी, रंचन बिसरूँ राम !॥ ८४ ॥

सुख सारे संसारके, अमर-धाम अभिराम ।
तो पद-रज-परतापते, रज कर जानूँ राम ! ॥८५॥

एक हि तेरे दरसकी, अन्तर तरस अकाम !
जाचूँ और न जायके, राचूँ और न राम ! ॥८६॥

कोऊ मेरो का करै, नहि काहूसों काम ।
जग झूठो रूठो सबै, तुम मति रूठो राम !८७॥

कहत कछू कछु कहत हूँ, दरस तरसके काम ।
वस बानो मेरी नहीं, दरद-दिवानी राम ! ॥ ८८ ॥

वरवस खल परवस किए, सरवस लूटन काम ।
उर मेरो निसदिन दहत, रहन कहां तुम ? राम ! । ८९॥

मम प्रलंब दुख हरनमें, किय बिलंब किहि काम ?
रज-कन गिरि सो करत हो, गिरि रज-कन सो राम ! ९०॥

दृग उकतावत देखिबे, उरहु उतावरि स्याम !
कब अनूप दिखराव हो ?, रूपगावरो राम ! ॥९१॥

सागर बन केते विकट, किते पहार कुठाम ।
अगम अजान अथाह अति, राह तिहारी राम !॥९२॥

जा बलते पाऊं तुम्हें, सो कहँ पाऊं ? स्याम !
आय इतै निज सरनकी, लजरखलीजे राम ! ॥९३॥

को तुम बिन हरि हैं विपद, विरद विचारौ स्याम !
दोष विसार दयाल दिल, मया राखिवी राम ! ॥९४॥

संत उदारन मुख सुन्यौ, विपद विदारन नाम
दुख मेरो दारत नहीं, कतरूखे रुख ? राम ! ॥ ९५ ॥

प्रबल पुन्य करि पाइये, तो दरसन सुखधाम
बिना सुकृत संचित किये, वंचित रहिए राम ! ॥९६॥

अब जु मिलौ पलहु न तजूं, भजूं पलनकों थाम
पद कंजन-रज नैन निज, अंजन अंजूं राम ! ॥९७॥

तो पंकज पावन भई, जो पावन भरपूर
मेरे सिर धरनी अवस, वा धरनीकी धूर ॥९८॥

जा निस जोऊं सुपनहूँ, पिय-मुख आनँद-कंद।
ता पर वारूं दिवस सो, उदे जु कोटि दिनंद ॥९९॥

जा पलमें करिवौ करूं, चित चितवन पियतोर
सोई पल मेरो सफल, अफल गिनूं सब और ॥१००॥

विकल वाक वोके सकहि, रसना कहि न रमेस !
रही कहत वाकी दसा, सब वाको संदेस ॥१०१॥

डाढ बाढ वह विपदकी, गाढ भगति तव तौन
कौन उकति करिके कहूं, मोमति करति कह्यौ न ॥१०२॥

"देखहि मो दुख" यह कहेउ, "कहेउ" गहेउ मुख नाम।
अखियां बरसावन लगो, झर सावन सी राम ! ॥१०३॥

बेग गये ही प्रभुबने. कहौं अधिक का और ?
वा कों तजि आयो वहां, सो जी जानत मोर ॥१०४॥

करुना रस करनन परे, भरे नेन भव-भूप
प्रात-चंद्र सो पेखियत, रामचंद्रको रूप ॥१०५॥

' सोक करन लागे कितें, लोक-सरन ! सिरमौर
हरन चिंत मनकी सबे. चरन चिंतवन तोर ॥१०६॥

सिय-दुख सुन सुन लखनके. झाल झाल अंग अंग।
रोम रोम रन रन करत, लाललाल दृग-रंग ॥१०७॥

' अगम काज कीनो सुगम, दुसतर तर्यौ तुरंत ।
कर्यौ न कोऊ करि सकें. तुम जु कर्यौ हनुमंत॥१०८॥

। चूड़ामनि मन रमनिकी. मनु चूड़ामनि नेह ।
चिंतामनकी हरनकों. चिंतामनि सी एह ॥१०६॥

रस-प्रवाह भरि रामके, हरि-वाहिनी सुभाय ।
तरु तोरति गरजति चली, मिली महोदधि जाय॥११०॥

।सिय सिधि[१]को बाधक भयो, मोह महोदधि वीर !
खल जन लौं खारो तऊ, गुरु जन लौं गंभीर॥१११॥

' हनुमद्वचन ः रामवचन १ मुक्ति

श्रीमद्रामरसामृतसिंचित अमृतसमशनिकायां कल्याणकल्पलतिकायां
समाप्तोऽयं पंचमो सुन्दरकाण्डः ॥५॥

अथ लंका काण्ड ।

(रावणकी राज-सभा)

सुनौ सचिव ! सैनप ! सुभट !, सावँत ! सकल सहाय!
अरि आयौ हरि-दल लिये, करिये कौन उपाय ?१॥

ईस ! आपसो अरनकों, अरि न आहि जग माहिं ।
परत दीठ जित कोपकी, परत दीठ कछु नाहिं ॥२॥

कर कपोल राखति सची, मन मलीन तन छीन ।
अनुज तनुज दनु जेस ! अस, कहा मनुज कपि दीन।३

(विभीषणका सलाह देना)

इनके कहे न कीजिये, जिय कीजिये विचार ।
बात बनावनहार ए, बात बिगारन हार ॥४॥

अपने दलबल प्रबलको, तब लग करो भरोस ।
रन धनुसर धारन करे, राघव करे न रोस ॥५॥

जो जोधा जग जीत हैं, सुर सभीत सुनि नाम ।
पौढ़े पैहौ पुहुमि पै, जु रन जुरैहौ राम ॥६॥

रन चढ़ि फिर नहिं फिरनके, बाट न जोयहु तात !
गए कालसे जोधए, गए कालकी भांत ॥७॥

कुल पुलस्त पावन परम, जामें जामे आप ।
ता दिस नेक निहारिए, जस विन वृथा प्रताप ॥८॥

कहत लोकमें तात ! यह, महतलोक अवलोक।
है सिलोक[1] मृत जियनकों, जियत मरन अपलोक॥९॥

जान अजान न हजिये, मान लीजिये बात।
बृथा जान जनि दीजिये, जान दीजिये तात ! ॥१०॥

ना हरि ना हर राखि हैं, ना विधि सकैं बचाय।
अहो कहां कल्यान-पथ, राम रिसाये राय ! ॥११॥

जौ लगि लंक मुचे नहीं, जौ लगि बल न नसाय।
जौ लगि धाम न उजरे, तौ लगि राम रिझाय ॥१२॥

जो सनमुख जावे सरन, दोस न देखै दाम।
पोसन करे सुपूतसो, रोस न आनें राम ॥१३॥

रावणका कोप विभीषणकी बिदाई

कुमत गहत उलटो बहत, गयो चहत जम-धाम
दूर होहि खल दीठ सों, रुचै जु तो कों राम ॥१४॥

तज ताकों काकों भजों, ताकों और न ठाम।
निरबल को बल राम है, निरधनको धन राम ॥१५॥

सुख-सीरी संसार सब, दुखमें दुरत तमाम।
दुख हारी देहोनके, सज्जन सनेही राम ॥१६॥

---

१ श्लोक (यश)

डावरमें डोलत कहा ?, पत्यौ बकनके फेर ।
या मग तो मुकता नहीं, हंसा ! मानस हेर ॥१७॥

बभीषणकी पुकार रामजीकी कृपा ।

पा तकि, आयो पातको, पातक-हरन-प्रवीन !
सरन चरन-तर राखिये, गुनही अरु गुन-हीन ॥१८॥

राख सकै को आप विन, राखसके भय दास ।
दीन-बंधु की सरन हौं, दीन बंधुकी त्रास ॥ १६ ॥

जनम मरन भय हरनको, अवर न ओटौ दाम ।
सरन रूप संसारमें, चरन रावरे राम ! ॥२०॥

संपति-घर ना सुघर-घर, तो घरको जु गुलाम ।
तो घर तज पर-घर भज, सो घर घरको राम ॥२१॥

दीन भिखारी दरसको, ठाढो तरसत साम !
सुनी गिरा गद्गद गरे, गरे लगायो राम ॥२२॥

दीन-बंधु विन दीनको, कौन सैन सुधि लैन ।
भल आए मुखते कह्यौ, भर आए सुख नैन ॥२३॥

तरु-तर घर जा दिन हुतौ, गुरुतर हुतौ कलेस
तुरत रंक लंकप कियो, सुर-तरु लौं सीतेस ॥२४॥

जो हरि-हित संगति तजे, संपति तजै न पासु ।
गयो बभीखन लंक तजि, भयो लंक-पति आसु ॥२५॥

परुष पनो पुरषानको, होत पुरुष-हित-हेत ।
लात-लंकपति अनुज कों, राम-दरस-फल देत ॥२६॥

रावणकी सभामें शुक सारनका प्रवेश । राम सेनाका वर्णन ।

राम बिलोके एकटक, अटक रही चित-चाल ।
मरकट हैं अपनी कटक, मरकट-कटक कराल ॥२७॥

राज-अनुज निज अनुज लौं, उन उरलायो नाथ !
लंकाको रघु-कुल-तिलक, कियो तिलक निज हाथ॥२८॥

नास करत नासा करन, हम हरि टेरे ईस !
जो न छुड़ावत लखन तौ, करत लखनसी कीस ॥२९॥

रावनको लागे चरन, लागे चरननि सोम ।
जिनको जग नाखैं निदरि, तिनको राखे राम ॥३०॥

समुद्रमें सेतु बंधन ।

अधम-उधारन नाममें, जिय ! संसो जनि लाय ।
पानी पर पाहन परे, जल-बाहन बनि जाय ॥३१॥

रावणको मन्दोदरीका समझाना

पिय ! बहुदिन गे बिख पियत, अब पियूख-रस चाख
तज हराम सों हेत हिय, नाह ! राम सों राख ॥३२॥

निसचै जानो नीच गति, तरुन[१] बहावन हारि।
सदा आपदा[२] रूपनी, पाप-नदी परनारि ॥३३॥

बँध्यो क-पति[३] छांतया कपति, विपति-पतित[४] पति याहि
पति! रघुपति-पतिनी रहे, पति[५] रहिबेकी नाहिं ॥३४॥

लंक जरी संतति मरी, आपद परी अनेक।
जबते तुम जानकि हरी, नाह! निहारौ नेक ॥३५॥

जो पातकके करत ही, भरत भलाई नाह!
तो सुकृत जु करते कठिन, सुकृती करते नाहँ ॥३६॥

तीन काल जो जगतके, अवगत कीजे आप।
चढ़त तिते टरि पापते, परत तिते करि पाप ॥३७॥

अभय असोक अनंद मय, जिहि जोवत ही जीव।
अहो पीव! वा पीवको, प्रेम-पियाला पीव ॥३८॥

जोगी जन जोवत रहैं, जाको मग सब जाम।
नागर पिय! आए सहज, सुखके सागर राम ॥३९॥

कहा हुतासनको जरै?, बूड़े कहाँ समंद?
हसनि मंद गति मंद त्यों, मति मंदोदरि मंद ॥४०॥

---

१ युवा या वृक्षोंको २ विपत्ति या जलदेनी ३ समुद्र ४ पड़ी
५ इज्जत

अंगद रावण संवाद

कै विदेहजा देहिगो, कै स्वदेह कुल देस ।
साईं कही सु कहत हौं, कहा कहत लंकेस ।४१॥

सूरवीर दानो पुरुष, इनको इक संकेत ।
ए कर-उत्तर देत हैं, मुख उत्तर नहिं देत ॥४२॥

मेघनादकी चढ़ाई । युद्ध वर्णन

गाजि गाजि भट घन भिरत, कोप न कछु दरसात ।
महिपर बरसेत वीर रस, करी खरी बरसात ॥४३॥

पय-संग यहै पियावहीं, वीर-जननि गहि बाल ।
समर भलो संहार पै, हार भलो नहिं लाल ॥४४॥

गजत सजत भट सेन अति, भजत देव भयभीत ।
बढ़त ओज रन-रंग सों, चढ़त जंग हरिजीत ॥४५॥

वैरिन चहुँ दिसि चखन ते, लखन दिखाई देत ।
जात लरन रन-भूमिकों, सरन भूमिकी लेत ॥४६॥

मारत मारत कहि उठे, मार मार तजि बान ।
हाक बाक राखस करत, करत हाक हनुमान ॥४७॥

लक्ष्मणकी मूर्च्छा । राम विलाप

लगी सकति लखि लखन कों, भगी सकति मम मित्र !
नहिं प्रकास सौमित्र[1] को, जो प्रकास सौमित्र ॥४८॥

१ सूर्य

नेक चखन खोलहु लखन !, छनक हुतौ उठि हेर ।
धीरज धर निज पीर कह, बोल बीर ! इक बेर ॥४६॥

हनुमान्‌जीका संजीवनी लाना लक्ष्मणकी चैतन्यता हनुमन्महिमा ।

सोन-पुरी किय द्रोन लै, गौन पौनको लाल ।
मनो सुधाधर कर धरे, धर सुत उठ्यौ उताल ॥५०॥

सोवत उठ्यौ सु वीरवर, हरि उर लायो अंग ।
पदम प्रफुल्लित पेखि कै, मनो लुभानो भृंग ॥५१॥

अदट अमिट अघटन-घटन, गाढ़ो गई वहोर ।
अस अजनी एकहि जन्यौ, जननी जन्यौ न और ॥५२॥

रावणने कुम्भकर्णको जगाया । रावण-कुम्भकर्ण संवाद

बंधु ! जगायो काज जिहि, आज करो अब सोय ।
अपनो अरु परिवारको, राम हते हित होय ॥५३॥

भैया ! तै भूँडी करी, ऊँडी दीठ न दीन ।
बिन विनसों बिनती किये, विनसे किते बलीन ?५४॥

जिन जीते तिन भगतिते, नहीं सगति ते स्याम ।
राम नहीं रन मरनके, मन सुमरनके राम ॥५५॥

प्रान हरनको हेतु तुम, कियो हरन मह नाय ।
तुम ताको ताको मरन, जाते मरन मिटाय ॥५६॥

समय न सोचत पोच मति! का उपदेसन आय?
सयन करावो अरिनको, करौ सयन के जाय ॥५७॥

कुम्भकर्णका युद्ध तथा संहार।

भवन-भयावन भीमतन, प्रलय-प्रथा प्रारंभ।
लगि अकास आयो लरन, काल-कका सुइ कुम्भ ॥५८॥

मन भायो मेरो भयो, वन आयो वर काम।
अब षायो छाड़ों नहीं, रह ठाढो तें राम!५९॥

जूझि जूझि संगर कियो, कीने धीर अधीर।
जगत-तीर आसुर गयो, लगत तीर रघुबीर ॥६०॥

कुम्भकर्णके लिये रावणका शोक

अचला विचला तो चलत, तप-तन तपत न भान।
मरन तोर रन नर-करन?. कुम्भ करन! मम प्रान!६१॥

मेघनाद बध। रावणका शोक

प्रान हरत हरि-जीतके, हरि सेना सानंद।
सुमन-झरी सुमनस करी, जयो सुमित्रानंद ॥६२॥

घन जिमि गाज्यौ जनमतहि, रन भाज्यौ अमरेस।
मेघनाद नर-कर मरयो, होतब अहो! अँदेस ॥६३॥

रावणका संग्राम तथा संहार।

मिट्यौ मोद परिवारको, सिट्यौ न बल-त्रारीस।
हट्यौ न हियकी हारते, दट्यौ समर दससीस ॥६४॥

कटत सीस प्रकटत नए, छुटत तीर रघुवीर ।
करत समर करतार सों, धन ! रावन रनधीर ॥६५॥

सर छांड़त छाजत सुछवि, लखि लाजत मन काम ।
घनसे गाजत वीर हरि, रन महि साजत राम ॥६६॥

धरनि धरयौ नहिं भार तन, तरनि तरयौ नहि तेज ।
लोक-सरनके सरन सों, सो सोयो धर-सेज ॥६७॥

दसमुख-सनमुख मुख करन, सुर-मुख को मुख नाहिं ।
फूस प्रमुख ता मुख परत, राम-विमुख सुखकाहि ?६८॥

डगति धरा डग धरतही, नत कपाल दिक्पाल ।
धूरि धसै मुख धर घसै, राम विमुख अस हाल ॥६९॥

मंदोदरीका विलाप

नारायन हैं नर नहीं, भार-हरन भगवान ।
कितो वार विनतो करी, कंत ! करी नहीं कान ॥७०॥

तज पियूख विख ही पियौ, लियो अजसको लाह ।
मन मान्यौ अपनो कियो,नाह ! जान्यो नाह ॥७१॥

तुम भोरे भरता लियो, वहु सिर सांटै धाम ।
एक माथके नमनते, जनते रीझत राम ॥७२॥

भयो न जा सम भट भुवन, सबल सबै जगसाख।
होवत लागी दण्ड दुइ, ता रावनकी राख ॥७३॥

इती बड़ी बाहनि हुती, इतौ प्रबल परिवार।
ता रावनके दाह-दिन, रह्यो न रोवन हार ॥७४॥

सीताजीका आना। तथा अग्निस्नान अग्निकृत सीता प्रशंसा।

जलन जाल बिच जानकी, अतुल कांति सों भाति।
राघव-प्रबल प्रताप बिच, बिमल कीर्ति की भांति॥७५॥

"आपहिकी नहिं आनकी, हिय हेरिय करि हेत।"
सेठ धनंजय रामकों, धरो धरोहर देत॥ ७६ ॥

तमकि रहै रवि-किरनमें, परम जोतिमें पाप।
तिमि सीता सत-सरितसी, अमल मानिये आप ॥७७॥

सील तपन संसारमें, तपन और अस कोय।
रहे महातम[1] होय है, गए महा तम होय॥ ७८ ॥

उपल पोत बिसते अमी, तम को बनत उदोत।
साँच, सील, हरि-हेतते, जो न होत सो होत॥ ७९ ॥

सीता राम-मिलन। स्वर्गसे दशरथजीका आना।

मिले परसपर बर समय, वह रस रसन बनै न।
दरस-सुधारस पान करि, बरस हरस-रस नैन ॥८०॥

---

१ महात्म्य।

सुखसंपति सब दृगनके, मन मन-सांति विराम।
सरवस सब संसारके, राजत सीता राम ॥ ८१ ॥

*हिय लाये दसरथ हरखि, परत पाय प्रभु पेख।
प्रेम उदधि उमड़्यो अधिक, रामचन्द्र सुत देख ८२

दशरथजी गए। शिवब्रह्मादिका रामजीकी स्तुति करना।

*ब्रह्म-कमंडल तात-मुख, गिरा गंग अभिराम।
बांधि जटा भव-हित छुटी, भलि राखी भव राम ॥८३

राम! रावरे दरसकी, सुनी अनूठी बात।
सरनागत तौ तरत पै, सर लागत तरजात ॥ ८४ ॥

राम! रावरे दानकी, आन बान कछु आन।
जो करतल हूं परत नहिं, करत सु करते दान ॥८५॥

श्रीसीता रामलक्ष्मणका सब समाज युत पुष्पकारूढ़ होकर अवध प्रयान।

अवधि काठ अटकन छुटे, राम सार जग तात।
भरत भाव चुंबक लगे, इचे अवधकों जात ॥ ८६ ॥

लखन सुकंठ रु बालि-सुत, हनुमत हते विसेख।
प्रबल प्रलंब सुरारि ए, परे समर सिय! देख ॥८७॥

पय पर पाहन पुल प्रिये! देख कितौ छवि देत।
नागरता नल नीलकी, सीते! सागर-सेत ॥ ८८ ॥

---

* श्लेष। * रूपक। १ संसार।

दास पोस दुख दोस हर, आसुतोस यह ईस ।
सीस नाय जग-सरनकों, सकल सुरनको सोस ॥८९॥

पुष्पकका पंपा सरोवरपर आना ।

वा दिन हे प्रिय वादिनी ! दुख पायो यहि देख ।
प्रगटत आजु प्रसन्नता, पंप सरोवर पेख ॥ ९० ॥

बैठ प्रिये विमान पर, लघु लागत गिरिराय ।
जिम परमारथ प्रथिककों, भवके भोग न भाय ॥९१॥

अयोध्याके समीप आना ।

परम मनोहर परम प्रिय, सखो ! लखो मोगाम ।
अति पुनीत सरजू अवध, करिये प्रिये ! प्रनाम ॥ ९२॥

हित जननी जननी जथा, पूज्य जथा पितु-काय ।
सुजन न भूलै जनम भर, जनमभूमिको भाय ॥९३॥

श्रीमद्रामरसामृतसिंचित अमृतसप्तशतिकायां कल्याणकल्पलतिकायां समाप्तोऽयं षष्ठमो लंकाकाण्डः ॥ ६ ॥

अथ उत्तरकाण्ड।

भरतजी तथा अवधवासियोंका प्रेम वर्णन।

करी पीठ तजि, दीठ जग, ईठ अवधकी ओर।
ता पलते पल पल पलटि, भई और की ओर ॥१॥

कौन चूक बिसरे हमें, दया न आनी दाम।
आवन दिन आए अहो !, अजौं न आए राम ॥२॥

अवधि आस गुजरी जरी, जीवन जीवन स्याम।
बहु दिन बीते बिरहमें, अब घर आओ राम ! ॥३॥

भल आयो या सुदिसते, जो जोए जगपाल।
हरे हरे कहरे सुआ !, ठहरे कहां कपाल ॥४॥

दया दीठ अवलोकिके, अवगुन विसरि असेस।
आवहिंगे अब तो अवस, अवधहि श्री अवधेस ॥५॥

प्रति दिनमें प्रति पहरमें, प्रति पल रामहि चाहि।
लगी रहै मेरी लगन, रँगो प्रेम-रँग माहिं ॥६॥

मात पिता भ्राता हितू, ए प्यारे जिमि प्रान।
राम मिलावैं आन जो, जानूँ राम-समान ॥७॥

जोग करन तिथि वारमें, है कित हूं अस लेख।
जा दिन दरसन रामके, सो दिन पांड़े ? देख ॥८॥

कहा बनावत तोतसी, अरे जोतसी ! बात ।
आछे दिन किनने किए, राम-दरस बिन जात ॥९॥

बार बार बूझत कहा, अरे मोत ! कुसलात ।
जग-जीवन जोए बिना, जीवन बीतो जात ॥१०॥

यह धोको मोको रहे, निस वासर जग-ईठ !
नरतनके निकरत दिवस, परत नहीं तुम दीठ ॥११॥

एरे मन ! मेरे ! सखे !, तरप नहीं लव लाव ।
हरि दरसन हांसी नहीं, इतौ मती उकताव ॥१२॥

हारत थोरे ताव पै, जल डारत हौ नैन !
जग काहूने बिन तपे, पाये राम सुनेन ॥१३॥

राम-विरह-रस दृग बहैं, हे नर ! अँसुआ हैं न ।
निरख नेह करि नैन सों, नेह नदी वर नैन ॥१४॥

विन तन इन बनत न रहन, रहत न तन अति पीर ।
हरन तरस हरि दरसकी, सींचत नैन सरीर ॥१५॥

रहे अपावन क्यों मिलैं, जग-पावन सुख ऐन ।
राम-दरस भावत इन्हैं, नित न्हावत यों नैन ॥१६॥

तपैं विरहकी आग सों, राम नाम सुख देन ।
अँसुआ-कन-माला लिये, जपैं जोगिया नैन ॥१७॥

भरतजीसे हनुमानजीका राम आगमन सुनाना ।

जासु कटनि तनु कृश कियो, रटहु रटनि सब जाम ।
आवत जग नन्दित करत, भरत रावरे राम ॥१८॥

हरि आएकी खबरिया, हरि ! आए तुम दैन ।
जिन बैननि तो जस बनै, वे नहिं जानूं बैन ॥१९॥

श्रीरामचन्द्र पुर प्रवेश वर्णन ।

आजु दूज सित पाखकी, हरख-घटासी बाम ।
चढ़ी अटा चित चटपटी, निरखन नव ससि राम॥ २०॥

अमी चवैं अचवैं सबै, गवैं सोग सन्देह ।
नव वधु नव वधुसों कहैं, नव विधु निरखन देह ॥२१॥

चातक दादुर मोरसे, तरसित लोग तमाम ।
किये हिये हरसित सबै, बरसि राम घनस्याम ॥२२॥

राम-दरस आनन्द-रस, सकौं न बाल बखानि ।
जिहिं डुबानि निज बानि[1] तज, बानि[2] भई बिन बानि२३

साधारन साजन मिले, मन नहिं मोद समाय ।
राम-मिलनकी बात सो, तात ! कही किमि जाय ॥२४

१ आदत २ शारदा

धनसो दिन मंगल भयो, भयो मुदित सब देस।
जय दुंदुभि सुर-सुमन झर, पुर प्रवेस अवधेस ॥२५॥

दरस तरस सबकी हरत, परत सुगुरु पद राम।
मोद भरत मन भरतके, मातुन करत प्रनाम ॥२६॥

†कुसल ? लाल ! चिरजीवहू, भले जियाए तात।
क्यौं दुख देखे ? अरि दले, दई ! कमल दल गात ॥२७॥

‡नहि बिसेस दुख बन सहे, तुम वियोग तजि माय।
जय पाई अरि प्रबल पै, पद-पसाय तुम पाय ॥२८॥

†छत कपाट कर सर धनुस, लखन इष्ट मम माय।
सह्यौ कष्ट सो इन सह्यौ, मेरे रह्यो समाय ॥२९॥

† दोष गये दारिद गये, भये सबै सिध काम।
भर आये सागर सुधा, तुम घर आये राम ॥३०॥

मैया ! भैया भालु कपि, विपद बँटैया जान।
इनको मैं प्रिय प्रानसो, ए मेरे प्रिय प्रान ॥३१॥

देह दिये चूकत नहीं, एक-एक-उपकार।
इनके सब दिनके भए, इनके ऋनके भार ॥३२॥

---

† माता ‡ राम

बात जात कापै कही, वात-जात की भ्रात !
वात-जात नहि होत तौ, बात जात सब तात !३३॥

दुखके दहन मिटायके, सींचे सुखके सोत ।
जो हनुमतै न होत तो, हमते कछू न होत ॥३४॥

धन ! बानर धन ! भालु वे, धन ! उनके पितु माय ।
जग गावत जिनको सुजस, वे जिनको जस गाय ॥३५॥

श्रीराम राज्याभिषेक वर्णन ।

निरखि अघात विरंचि नहिं, रचना रुचिर सुदेस ।
अमर लोक इच्छत नहीं, अवध देख अमरेस ॥३६॥

पूरन काम अकाम हित, कोटि काम अभिराम ।
सिंहासन सीता सहित, राज विराजत राम ॥३७॥

जग-सागर कीनो परम, सुख-सागर अभिराम ।
बरस बरस आनन्द रस, रसिक सिरोमनि राम ॥३८॥

सुख-सागर सीमा तजी, सूने भे सुरधाम ।
राज बिना जमराज भे, राज विराजत राम ॥३९॥

श्रीशिव से जाचक जहाँ, विधि से वंदि विचार ।
दरस-समय सुरपति तकैं, जयो ! राम-दरबार ॥४०॥

श्रीराम स्तवन तथा ग्रंथ समाप्ति।

राम ! रावरे रूपकी, जगत जगति लखि जोत।
नैन अनंदित होत हैं, हियो प्रफुल्लित होत ॥४१॥

राम ! तिहारो प्रेम रस, जब उमड़त उर माहिं।
छाती सीतल भरत गल, नेन सजल हो जाहिं ॥४२॥

राम ! रावरी लगन लग, सकल सुगुन गन पांत।
बिना बुलाये आवहीं, सुहृद भ्रातिकी भांत ॥४३॥

राम ! लगन लग आप सों, राज राज छिटकाय।
वन वनमें ढूंढ़त फिरैं, जोगी बन बन जाय ॥४४॥

जब जगके मरकट जुटे, तुम पै आन तमाम।
मन मरकट मेरो अटकि, रह्यौ कवन बन ? राम !४५

जिन पर डारी दीठ तुम, जिन तर टारो घाम।
सुर रूखन कीरत करी, उन रूखनकी राम !४६॥

प्रगटत परमानन्द पद, मिटत मोह मद काम।
कटत पास जगजालकी, रटत नाम तव राम ! ४७॥

वे आनन आनन नहीं, जिन गानन तो नाम।
भूखी प्रेम पियूखकी, रसना रूखी राम ! ४८॥

ग्रन्थ बटोरे जगतके, कर छोरे सब काम ।
तोरे रँग राचे बिना, कागज कोरे राम ॥४६॥

सुनत तिहारे चरितकों, गावत तो गुन ग्राम ।
जिन घट प्रगट न प्रेम रस, वे घर मरघट राम ॥५०॥

भूल तिहारी भगतिकों, करत जगतके काम ।
चिन्तामनकी चवनकों, रंक न जाने राम ॥५१॥

लिए सास तुम रत नहीं, सुमरत नहिं तो नाम ।
नर-तनके मारे गए, रतन हमारे राम ! ॥५२॥

उदर भरत अघ भार धर, नर न रटत तो नाम ।
उन वासर ऐसे गए, रासभकेसे राम ॥५३॥

भव भुअंगके डंकको, अंग अंग विस जाम ।
विन कीने तो पदरती, रती न औखध राम ॥५४॥

नेह लगावत आपसों, जोगी जन अभिराम ।
भेद भाव लावत नहीं, राव रंकमें राम ॥५५॥

पलटत तेरी पलकके, पलटत खलक तमाम ।
राव रंकसे होत है, रंक रावसे राम ॥५६॥

सेस गनेस महेस मुनि, गावत जो गुन ग्राम ।
नारद सारद वेद हूं, पार न पावत राम ॥५७॥

कर धनु सर साधन किये, मोहन श्री घनश्याम ।
जब मम कर जम-कर परें, तब कछु करियो राम ॥५८॥

पाय पियूस न क्यों पिये ? सहज काम बिन दाम ।
अस रसना कहु पाय हैं, री रसना ! कहु राम ॥५९॥

सत सुरता सरजू बहै, अवध अहिंसा साज ।
बसरे मन ! अबतौ वहां, जहां रामको राज ॥६०॥

गुरु गरुओ कोऊ मिल्यौ, जिय लीनौ में जोय ।
रटन रामके नामकी, सुआ ! सिखाई तोय ॥६१॥

परे रहैं परपञ्च सब, धरे रहैं धनधाम ।
जुग आखर तो नामके, आखर मेरे राम ॥६२॥

एक बेर अवलोकिए, नेकु कृपा करि स्याम !
काम हमारो जमत है, रमत तिहारो राम ! ॥६३॥

कृपा तिहारी वस्तु तव, कृपा तिहारो काम ।
राम रसामृत सतसई, रची सु रुचिसों राम ॥६४॥

राम-सतसई रामको, गौरव स्मृति गोपाल ।
भनैं गुनै सीखैं सुनैं, रीझैं राम दयाल ॥ ६५ ॥

चरन धरन तव धरनपै, जित जित भयो ललाम ।
रघुनन्दन ! मो दीन को, वन्दन मानौ राम ! ॥६६॥

अथ ग्रन्थ प्रशस्ति ।

राम सतसई राम को, आसय घनो गभीर ।
धीरे धीरे पाय हैं, राम-रसिक मतिधीर ॥ ६७ ॥

श्री मरुधरपति-राज में, ग्राम कुचेरा थान ।
कायथ माथुर भीम कुल, राम सनेह सुजान ॥६८॥

अति सुशील परहित सुमति, हरिजन श्रीगोपाल ।
तासु नँदन नँद को अनुज, रचना रची रसाल ॥६९॥

निधि मुनि निधि विधु विक्रमी, राम जनम दिन जान
बरस पांच भीतर भयो, पूरन ग्रन्थ प्रमान ॥ ७० ॥

राम-सुजस आनन्द-रस, जो ललाट अस लेख ।
अमृत-सरीसी सतसई, अमृत करोसो देख ॥ ७१ ॥

पूरन राम चरित्र को, वरनन यामें नाहि ।
राम-रसिक नागर लहैं, सागर गागर माहिं ॥७२॥

श्रीमानस मानस-सुखद, जिन लीन्ही अवगाहि ।
रामचन्द्रिका जिन पढ़ी, सहज समुझिहैं याहि ॥७३॥

टीका बनत बिलम्बसो, सास बिसास न कोय ।
करी प्रकाशित मूलही, सुकवि बिलोकन सोय ॥७४॥

जमक नेक चित देतही, लेत सुकवि मनमाहि ।
कहुँ कहुँ सरल सिलेस हैं, लेस कठिनता नाहिं ॥७५

राम विरोधी वाक जे, ते सब हैं अविरोध ।
पद छेदन करि जुगतिसो, लेत सुमति जन सोध ७६

कितेक दोहे कठिन हैं, किते दुरन्वय जान ।
जान परैगो भाव सब, कछुश्रम किये सुजान ॥७७॥

राम नाम पावन परम, पद पदमें परकास ।
पढ़त ग्रन्थ यह होयगो, पाप पुञ्जको नास ॥ ७८ ॥

जैसी कृति या ग्रन्थकी, तैसो करता नाहिं
ज्यौं मनि कारे नागपै, त्यौं यह कृति मोपाहिं॥७९॥

भयौ पिंड अति पापसों, करयौ ग्रन्थ सुबुधैव ।
तात-कृपा राघव-मया, दया दीठ गुरुदेव ॥ ८० ॥

जिन भक्तन जिन कविनके, वचन लिये गहिसार ।
तिन तिन कों वंदन करूं, उर मानूँ उपकार ॥८१॥

जो बाचैं सीखैं सुनैं, लिखैं विचारैं याहि ।
तो पुनवान सुजानसो, राम राम मम आहि ॥ ८२ ॥

श्रीमद्रामरसामृतसिंचित अमृतसप्तशतिकायां कल्याणकल्पलतिकायां समाप्तोऽयं सप्तमो उत्तरकाण्डः ॥ ७ ॥

किस दोहेमें किनके वचन हैं इसका ब्यौरा जहां जहां स्पष्ट नहीं है वहां वहांके लिये।

पृष्ठ ६। विश्वामित्र ३४।३७। दशरथ ३५।३६। वशिष्ट ३८

पृष्ठ ७। विश्वामित्र ४१।४२। अहल्या ४४ से ४६

पृष्ठ १०। राम ६३ से ६६ तक। सीताकी सखी ६७ से ६९

पृष्ठ ११। साधुराजा ७३। विश्वामित्र ७४

पृष्ठ १६। दशरथ ७ से १०। राम ११। केकयी १२

पृष्ठ १७। राम १३ से १८। कौशल्या १९

पृष्ठ १८। कौशल्या २१ से २६। राम २३

पृष्ठ १९। कौशल्या २७, तथा ३० से ३४ तक। राम २८। सीता २९

पृष्ठ २२। राम ५३

पृष्ठ २४। निषादराज ६८। सुमन्त ६९। राम ७०

पृष्ठ २५। सुमन्त ७१। दर्शकगण ७२। केवट ७३।७४।७६

पृष्ठ ३५। वशिष्ठ १४६।१४७। भरत १४८ से १५०

पृष्ठ ३८। निषादराज १६७ से १७० तक

पृष्ठ ३९। भरत १७२। वशिष्ट १७४

पृष्ठ ४०-४१। मन्त्री १७८। भरत १७९ से १८३। राम १८४ से १९१

पृष्ठ ४६। राम ९।१०।१३। शूपनखा ११।१२

पृष्ठ ४७। शूपनखा १४। लक्ष्मण १५।१६।

पृष्ठ ४९। सीता ३०

पृष्ठ ५३।५४। राम ६३ से ६८। जटायु ६९।७० राम ७१

शुद्धिपत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८	१४	संग जाहिं	पै जाहिं
३०	६	हिये	लिये
३२	१०	माहि	मोहि
५७	६	बंधु !	बन्धु !
८२	१	पत्यौ	पर्‍यौ
८८	४	साजत	राजत
८८	१५	जान्यो	न जान्यो
९०	१	सन	सब
९१	७	प्रथिक	पथिक
९५	२	मङ्ग ़ भयो	मङ्गल भयो
९५	१०	समाय	सहाय

श्रीहरिः।

श्रीमान् अमृतलालजीकी "अमृत सतसई" को पढ़कर मैं परमाह्लादित हुआ हूं। यह हिन्दी संसारमें विहारी सतसईकी तरह आदर पानेके योग्य है। इस समय ऐसी कविताका होना हिन्दीके लिये विशेष गौरवकी बात है।

—श्रीधर शर्म्मा,
पुष्कर क्षेत्र।

* *

अमृत तिहारी सतसई, जा दिन जनम लियोह
सुकवि चकोरनके मनो, उडुगणपति उदयोह।

—शिवदत्तराय—रतनगढ़।
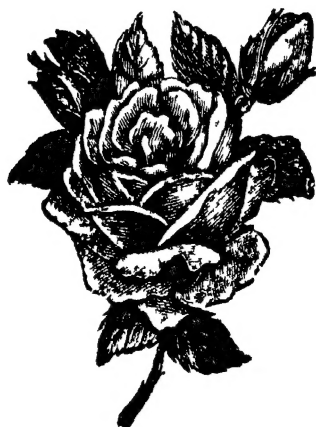
पुस्तकोंकी सूची ।

—०—

१ श्रीमद्रामरसामृत (अमृत सतसई) बिना जिल्द ॥=)

जिल्द बधी हुई १=)

२ श्रीरामसुधारस (रामप्रेमरसपूर्ण पद्माला)

बिना जिल्द ।)

जिल्द बंधी हुई ॥)

३ कीर्त्ति राघव यमक काव्य

अति मधुर ५० यमक द्रुतविलम्बित पद्योंमें प्रेमरसपूर्ण

रामायण (छपेगा) ।)

४ मारवाड़ी-कंठाभरण

मारवाड़ी भाषामें शिक्षाप्रद (गीत) -)।

मिलनेका पता—

श्रीनन्दलालजी माथुर ।

(कुबेरा वाले)

नया वास

जोधपुर (मारवाड़)